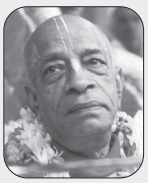

भगवद्दर्शन हरे कृष्ण आन्दोलन की अंग्रेजी पत्रिका **(Back to Godhead)** का अधिकृत हिन्दी संस्करण है, जिसकी शुरुआत श्री श्रीमद् ए.सी. भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद ने सन् १९४४ में अपने गुरु श्री श्रीमद् भक्तिसिद्धांत सरस्वतीमहाराज की आज्ञानुसार की थी।

'भगवद्दर्शन' अखिल मानवता कोआध्यात्मीकृत करने का सांस्कृतिक साधन है। इसके ध्येय इस प्रकार से हैं:

१. सत्य और भ्रम,जड़ और चेतन, नित्य और अनित्य का भेद लोगों को समझाना।

२. भौतिकतावाद के दोष लोगों को बताना।

३. वैदिक संस्कृति के अनुसार आध्यात्मिक जीवन का प्रशिक्षण देना।

४. वैदिक संस्कृति की रक्षा और प्रचार करना।

५. भगवान् श्रीचैतन्य महाप्रभु के उपदेश के अनुसार भगवान् के दिव्य नाम का संकीर्तन करना।

६. पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् श्रीकृष्ण का स्मरण करने और उनकी सेवा करने के लिए सारे जीवों की नम्र भाव से मदद करना।

बी.बी.टी. के समन्वयक एवं ट्रस्टी : श्रीमद् गोपालकृष्ण गोस्वामी महाराज, श्रीमद् जयाद्वैत स्वामी महाराज • **संपादक :** महाप्रभु दास (आर.के. माहेश्वरी) • **उपसंपादक :** वंशी बिहारी दास • **सहायक :** व्रजबासी दास, मुरारी गुप्त दास • **व्यवस्थापक :** सच्चिदानंद दास • **कला निर्माता :** सुंदररूप दास • **वित्तीय प्रबंधन :** सहदेव दास (एस.पी.माहेश्वरी), मंजरी देवी दासी • **प्रसार व्यवस्थापक :** पाण्डुरंग दास

©२००९भक्तिवेदान्त बुक ट्रस्ट,

मुद्रित एवं प्रकाशितः **उज्ज्वल जाजू** द्वारा **भक्तिवेदान्त बुक ट्रस्ट।** ; प्रकाशन स्थानः **३३, जानकी कुटीर, जुहू, मुम्बई-४९;** मुद्रणः **मैग्रा ग्राफिक्स लि.** १०१ सी ॲन्ड डी, गव्हर्नमैन्ट इन्डस्ट्रीयल इस्टेट, कांदीवली (पश्चिम) मुंबई - ४०००६७. सम्पादकः **आर.के.महेश्वरी, ४, मुरलीमहल, खार (प.), मुम्बई-५२**

विषय-सूची

वर्ष २२ अंक ४ अप्रैल २००९

आमुख लेख

२
सच्चा ज्ञान कैसे प्राप्त करें
श्रील प्रभुपाद समझाते हैं कि सच्चा ज्ञान भगवान् द्वारा दी गई बुद्धि द्वारा ही समझा जा सकता है।

६
भक्ति में अचलता
सेवा और साधना ये दो तत्त्व भक्ति में अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं।

महाभारत की विवादास्पद कथायें

८
एकलव्य पर अन्याय
धर्म के चुनाव की स्वतन्त्रता देने के साथ-साथ राज्य को सभी नागरिकों के लिए एक भगवद्केन्द्रित जीवन को बढ़ावा देना चाहिए।

कैसे आई मैं कृष्णभावना में

१०
उलझनों से उत्तरों तक
बचपन से प्राप्त संस्कार और संगति आगे चलकर कृष्णभावना अपनाने में सहायक बनते हैं।

शास्त्र-सिद्धान्त

१४
कर्मों का अचूक न्याय
'अच्छे लोगों के साथ बुरा क्यों होता है?' आइये जानें।

१८
यूरोप में गोरक्षा
हरे कृष्ण कृषिक्षेत्रों से किसान गोरक्षा, बैल शक्ति तथा आत्मनिर्भरता के अन्य पहलुओं पर चर्चा करने के लिए मिलते हैं।

इस्कॉन जगत् ५

श्रील प्रभुपाद की वाणी २५
झुकने के लिए बाध्य

श्रीभगवान् ने कहा २७

केन्द्र सूची ३०

दिनदर्शिका ३१

सम्पादकीय ३२
क्षणभंगुरता

'भगवद्दर्शन' पत्रिका साल में बारह बार प्रकाशित की जाती है। सदस्यता शुल्क- वार्षिक : १५० रुपए , द्विवार्षिक :३०० रुपए , पंचवार्षिक : ७०० रुपए। आप किसी भी महीने से सदस्य बन सकते हैं। मनीआर्डर *'भगवद्दर्शन'* के नाम से भेजा जाए। शुरू में भेजते समय या संपादक के साथ पत्र-व्यवहार करते समय अपना पूरा नाम और पता पिनकोड के साथ साफ अक्षरों में लिखें। अगर पते में परिवर्तन हो तो तुरंत सूचना दें। चेक से रकम भेजनी हो तो मुंबई के बाहर के चेक के लिये १० रु. अधिक भेजें। चेक *'भगवद्दर्शन'* के नाम से भेजें।

संपादकीय कार्यालय : *'भगवद्दर्शन'*, ३०२, अमृत इंडस्ट्रियल एस्टेट, ३री मंजिल, पश्चिम एक्सप्रेस हाइवे मीरा रोड (पूर्व), ४०११०४ दूरभाषः-३२५५६७०१ पत्र व्यवहार के लिए पाठक btghindi@pamho.net पर भी लिख सकते हैं।

हरे कृष्ण संस्था के भक्तों के नाम भगवान् या भगवद्भक्तों के नाम के बाद 'दास'(पुरुषों के लिए) या 'देवी दासी'(स्त्रियों के लिए) जोड़ कर दिये जाते हैं। उदाहरण के लिए-कृष्णदास, मध्वाचार्य दास या यमुना देवी दासी इत्यादि।

श्रील प्रभुपाद
की शिक्षाओं से

लॉस एन्जिलिस, १६ मई, १९७०

सच्चा ज्ञान कैसे प्राप्त करें

विद्यां चाविद्यां च यस्तद्वेदोभयं सह।
अविद्या मृत्युं तीर्त्वा विद्ययामृतमश्नुते ।।
''केवल जो अज्ञानता और दिव्य ज्ञान की पद्धति को साथ-साथ सीखता है, जन्म-मृत्यु के चक्र के प्रभाव से मुक्त हो शाश्वतता के परम आनन्द का आस्वादन कर सकता है।'' (श्रीईषोपनिषद, मन्त्र ११)

लोग समझ नहीं पाते कि शाश्वतता क्या है। क्योंकि उन्हें इसके विषय में कुछ भी ज्ञान नहीं है, उनके अनुसार यह अत्यधिक अस्पष्ट विषय है।

आजकल हम अपने ज्ञान की प्रगति पर अत्यधिक गर्वित हैं। किन्तु ऐसी अनेक चीजें हैं जिनके विषय में हमें ज्ञान नहीं है और अपने आधुनिक प्रयोगों द्वारा हम कभी उन्हें समझ भी नहीं पायेंगे। यदि आप सच्चा ज्ञान चाहते हैं, आपको अवश्य ही ज्ञान के स्रोत के पास जाना चाहिए - वेद। वेद का अर्थ है - ''ज्ञान''।

वेदों में १०८ उपनिषद हैं, जिनमें से नौ अत्यधिक महत्वपूर्ण हैं। और नौ में से यह ईषोपनिषद् पहला है इसके बाद तैत्रीय उपनिषद, माण्डुक्य उपनिषद, मुण्डक उपनिषद। उप का अर्थ है ''निकट''। यह ज्ञान आपको श्रीकृष्ण के निकट ले जाएगा।

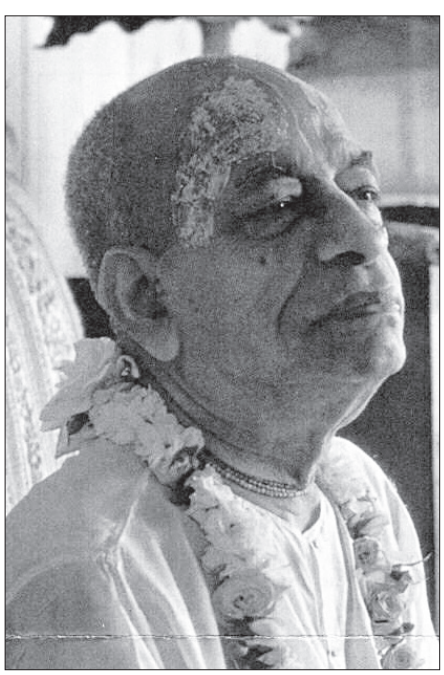

समाज के सर्वाधिक विद्वान्, आचार्यों के लिए सबसे महत्वपूर्ण प्रमाण श्रुति है जिसका अर्थ है वेद। वह प्रायोगिक ज्ञान नहीं है। इस ज्ञान को कलूषित बद्धजीवों, जिनकी इन्द्रियाँ अपूर्ण हैं और जो वस्तुओं को वास्तविक रूप से नहीं देख सकते, के प्रयोगों द्वारा प्राप्त नहीं किया गया है। वे केवल अपना मत प्रस्तुत करते हैं, ''यह शायद ऐसा हो सकता है।'' वे केवल इतना ही कह सकते हैं। वह ज्ञान नहीं है।

ज्ञान त्रुटिरहित और निश्चित् होना चाहिए।

बद्धजीव गलतियाँ करते हैं, भ्रम में पड़ते हैं, अपूर्ण इन्द्रियाँ होती हैं और धोखा देते हैं। जो कोई भगवद्गीता को नहीं समझता किन्तु इस पर टीका लिखता है वह जन-साधारण को धोखा दे रहा है। क्योंकि वह एक विद्वान् के रूप में माना जाता है, वह भगवद्गीता की प्रसिद्धी का लाभ उठाकर स्वयं की टीका लिखता है।

ऐसे लोग दावा करते हैं कि कोई भी अपना मत प्रस्तुत कर सकता है। किन्तु यह पद्धति नहीं है। आप कुछ भी मत प्रस्तुत नहीं कर सकते। मान लीजिए मैं कृष्णभावना का प्रचारक हूँ, मैं चिकित्सा विज्ञान पर अपना मत कैसे दे सकता हूँ? यह मूर्खता है। मैं अपने क्षेत्र के अन्तर्गत मत दे सकता हूँ। वह सही है। किन्तु कोई मेरा मत किसी जटिल उपचार हेतु मांगता है, मैं उसमें क्या कर सकता हूँ?

गुरु की आवश्यकता

सही ज्ञान प्राप्त करने हेतु सही व्यक्ति के पास जाना आवश्यक है। इसलिए कहा गया है, *तद् विज्ञानार्थं स गुरुं एवाभिगच्छेत्* - ''इन वस्तुओं को सही प्रकार से समझने हेतु व्यक्ति को नम्रतापूर्वक ऐसे गुरु की शरण में जाना चाहिए जिसने वेदों का भली-भाँति अध्ययन किया है और परम सत्य की भक्ति में पूर्णतया समर्पित है।'' (मुण्डक उपनिषद् १.२.१२)

और भगवद्गीता (४.३४) में भगवान् श्रीकृष्ण कहते हैं,

तद्विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया।
उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्त्वदर्शिनः ।।

''गुरु के पास जाकर सत्य सीखने का प्रयास करो। नम्रता पूर्वक उनसे जिज्ञासा करो और उनकी सेवा करो। आत्मसाक्षात्कारी महात्मा आपको ज्ञान प्रदान करेंगे क्योंकि उन्होंने सत्य का दर्शन किया है।'' *तत्त्वदर्शिनः* का अर्थ है जिसने सत्य का दर्शन या साक्षात्कार किया है। आपको ऐसे व्यक्ति के पास जाना होगा।

आज के श्लोक में कहा गया है, *अविद्या मृत्युम्* - यदि आप गुरु के पास नहीं जायेंगे, आप अंधकार में ही रहेंगे। मुण्डक उपनिषद् से जो श्लोक मैंने उद्धृत किया था, उसमें शब्द *गच्छेत्* का अर्थ है ''अवश्य जाना चाहिए।'' कोई ऐसा नहीं सोच सकता, ''हाँ, मैं गुरु स्वीकार कर भी सकता हूँ और नहीं भी कर सकता। पुस्तकें तो हैं ही। मैं उनसे भी ज्ञान प्राप्त कर सकता हूँ।'' नहीं। आध्यात्मिक ज्ञान को समझने हेतु आपको अवश्य ही गुरु के पास जाना होगा। अन्यथा आप अविद्या, अज्ञानता में रहेंगे।

विद्यां चाविद्यां - दो विभाग, अंधकार और प्रकाश। आपको अवश्य ही दोनों को समझना होगा - माया क्या है और कृष्ण कौन हैं। तब आपका ज्ञान पूर्ण होगा।

हाँ, वास्तविकता तो यह है कि श्रीकृष्ण इतने अच्छे हैं कि यदि आप किसी न किसी प्रकार से उनकी शरण स्वीकार करते हैं, आपको बाकी कुछ करने की आवश्यकता नहीं रहती। यदि आप पूर्णतया श्रीकृष्ण की शरण लेते हैं, आप स्वयं ही सीख जायेंगे कि माया क्या है। श्रीकृष्ण आपको अन्तःकरण से बुद्धि देंगे। श्रीचैतन्यचरितामृत (मध्य १९.१५१) में कहा गया है, *गुरु कृष्ण प्रसादे पाय भक्ति लता बीज,* गुरु और कृष्ण की कृपा से व्यक्ति भक्ति में

प्रवेश करता है। यह कैसे है? कृपा साथ-साथ आती है। यदि आप गुरु की खोज नहीं कर पायें हैं किन्तु आप गम्भीर हैं, श्रीकृष्ण आपको प्रामाणिक गुरु तक ले जायेंगे। और यदि आपको प्रामाणिक गुरु मिल जाते हैं, वे आपको श्रीकृष्ण तक ले जायेंगे।

श्रीकृष्ण सदैव आपके हृदय में चैत्य-गुरु के रूप में बैठे हैं। और हृदय में बैठे वही गुरु बाहर साक्षात् गुरु के रूप में प्रकट होते हैं। श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुर लिखते हैं, *साक्षाद्धरित्वेन समस्त शास्त्रैरुक्तस्तथा भाव्यत एव सद्भिः।* साक्षात् का अर्थ है ''प्रत्यक्ष रूप से''। गुरु प्रत्यक्ष रूप से श्रीकृष्ण के प्रतिनिधि हैं। यह सभी शास्त्रों का मत है - *समस्त शास्त्रैः।* और यह केवल शास्त्रों में ही नहीं बताया गया है अपितु सभी महान् साधओं द्वारा भी स्वीकार किया गया है - *सद्भिः।*

विद्या और अविद्या

हमें सीखना चाहिए कि विद्या और अविद्या क्या हैं। अविद्या का अर्थ है भौतिक ज्ञान। भक्तिविनोद ठाकुर ने गाया है, *जड़विद्या जतो, मायार वैभव* - ''भौतिक ज्ञान में प्रगति का अर्थ है माया के अधिपत्य में प्रगति।'' जितना अधिक आप भौतिक ज्ञान की जकड़ में फँसते हैं, उतना कम आप कृष्णभावना को समझ पायेंगे। जो लोग भौतिक ज्ञान में बहुत प्रगति किए हैं उनका सोचना है, ''यह कृष्णभावनामृत आंदोलन क्या है?'' उन्हें कोई आकर्षण नहीं है। उदाहरणतः, भारतीय विद्यार्थी जो अमरीका का तकनीकी ज्ञान सीखने आए हैं प्रश्न पूछते हैं कि हमें कृष्ण भावना में रुचि क्यों होनी चाहिए। उन्होंने इसका त्याग कर दिया है। जब वे देखते हैं कि मैं उन्हीं चीजों को, जिन्हें उन्होंने भारत में त्याग दिया था, पुनः यहाँ दे रहा हूँ, उन्हें अत्यधिक आश्चर्य होता है।

मैं अमरीका इसलिए आया क्योंकि आधुनिक भारत ने आध्यात्मिक ज्ञान का तिरस्कार कर दिया है। भारतीय सोच रहे हैं कि यदि वे पाश्चात्य तकनीकी ज्ञान की नकल करेंगे, वे खुश हो जायेंगे। ऐसी सोच माया है। वे नहीं देखते कि जो लोग हमसे तकनीकी ज्ञान में तीन सौ गुना अधिक प्रगत हैं - उनके पास वास्तव में क्या है? वे उसे नहीं देखते।

भारत, अमरीका और यूरोप के समान तकनीकी ज्ञान में प्रगति नहीं कर सकता क्योंकि पाश्चात्य देशों ने यह कार्य बहुत लम्बे समय से किया है। किन्तु भारतीय संस्कृति सृष्टि के प्रारम्भ से आध्यात्मिक संस्कृति है।

व्यासदेव को देखिए। वे वैदिक ज्ञान के मूल गुरु हैं। वे कैसे रह रहे थे? हिमालय में बद्रिकाश्रम में एक कुटिया बनाकर। किन्तु उनका ज्ञान देखिए! उन्होंने अनेक पुराण लिखे हैं और उनमें से एक है भागवत् पुराण। वेदान्त दर्शन, महाभारत - यदि आप प्रत्येक श्लोक को समझने का प्रयास करे तो जीवन भर अध्ययन करना भी पर्याप्त नहीं हो पायेगा। कुछ पुस्तकों में उन्होंने १००,००० श्लोक लिखे हैं और अनेक में २०,००० या २५,००० से कम नहीं हैं। प्रत्येक श्लोक इतने अधिक गहरे अर्थ से भरा है कि उसे समझने में जीवन लग जायेगा।

यह वैदिक संस्कृति है। वैदिक संस्कृति में संग्रहित ज्ञान की कोई तुलना नहीं है। और यह ज्ञान केवल आध्यात्मिक ज्ञान ही नहीं है किन्तु अन्य विभागों जैसे खगोल शास्त्र एवं गणित इत्यादि का भी ज्ञान है। ऐसा नहीं है कि पुराने समय में हवाईजहाज नहीं थे। पुराणों से हमें हवाईजहाजों के विषय में ज्ञान मिलता है। वे इतने शक्तिशाली और द्रुत गति के थे कि वे सरलता से दूसरे ग्रहों तक जा सकते थे। अर्जुन स्वर्गलोकों तक गए थे।

ऐसा नहीं है कि वैदिक युग में भौतिक ज्ञान में कोई प्रगति नहीं थी। उस समय का ऐश्वर्य आज के ऐश्वर्य से कहीं अधिक था। सोना, आभूषण - प्रत्येक शहर, प्रत्येक व्यक्ति के पास थे और राजा एवं धनवान व्यक्तियों का तो कहना ही क्या। भौतिक प्रगति थी किन्तु लोग उसकी अधिक परवाह नहीं करते थे। वे आध्यात्मिक ज्ञान में रुचि रखते थे।

यदि हम अविद्या या भौतिक विज्ञान में प्रगति करते हैं, हमें पुनः पुनः जन्म-मृत्यु के चक्र से दुःखी होना पड़ेगा। और इसकी कोई गारण्टी नहीं है कि आपका अगला जन्म कहाँ होगा। वह आपके हाथ में नहीं है। आप मनमानी नहीं कर सकते। अभी आप सुखी अमरीकी हैं, किन्तु शरीर छोड़ने के पश्चात् आप मनमानी नहीं कर सकते, ''कृपया मुझे पुनः अमरीकी शरीर दे दो।'' नहीं। वह सम्भव नहीं है। आपको शायद अमरीकी शरीर मिल जाए किन्तु हो सकता है कि वह अमरीकी पशु का शरीर हो। तब आप कसाईघर में ले जाए जाओगे।

वास्तविक ज्ञान

भौतिक ज्ञान, राष्ट्रवाद, समाजवाद - वे केवल समय की बर्बादी है। वास्तविक ज्ञान वैदिक ज्ञान एवं श्रीकृष्ण के विषय में ज्ञान है। *बहुनां जन्मनामन्ते ज्ञानवान्मां प्रपद्यते* (भगवद्गीता ७.१९)। इसलिए जो वास्तविक ज्ञान में है वह अनेक - अनेक जन्मों के पश्चात् श्रीकृष्ण के पास आता है और उनकी शरण स्वीकार करता है। ऐसा व्यक्ति साक्षात्कार करता है, *वासुदेव सर्वमिति*- ''वासुदेव, श्रीकृष्ण, आप सबकुछ हो।'' (भगवद्गीता ७.१९)

हम उसी ज्ञान को मुफ्त में कुछ भी धन लिए बिना वितरित करने का प्रयास कर रहे हैं। हमारा आंदोलन अत्यधिक महान् है। आपको इस उत्तरदायित्व का ज्ञान होना चाहिए। हम यह सर्वोत्तम वस्तु पूरे मानव समाज को दे रहे हैं। इसे पूर्णतया समझने का प्रयास करो और इसका वितरण करो। ऐसा करने से आप श्रीकृष्ण को अत्यधिक प्रिय हो जाओगे। वे भगवद्गीता में कहते हैं, *न च तस्मान्मनुष्येषु कश्चिन्मे प्रियकृत्तमः*, ''जो कृष्णभावना का प्रचार कर रहा है उससे अधिक प्रिय मुझे और कोई नहीं है।'' इसलिए यदि आप शीघ्र ही श्रीकृष्ण को प्रिय बनना चाहते हैं, इस कृष्णभावना का प्रचार बहुत ही अच्छी प्रकार से कीजिए।

बहुत बहुत धन्यवाद।

चीनी भक्तों ने भी मनाया वृन्दाकुण्ड महोत्सव

वृन्दाकुण्ड मन्दिर स्थापना की छठीं वर्षगाँठ अनेक वृजवासियों एवं इस्कॉन के भक्तों ने मनाई, जिनमें अधिकांश चीनी भक्त थे। अनेक स्त्रियाँ पावन सरोवर से अपने सिर पर जल भरे मटकों के साथ नृत्य करती हुई नन्दमहाराज के मन्दिर जाकर वृन्दाकुण्ड तक आईं जहाँ कथा एवं आरती का आयोजन किया गया।

दीनबन्धु दास

भरतपुर जेल के कैदियों ने अपनाई कृष्णभक्ति

भरतपुर जेल के पचास कैदी प्रतिदिन भगवद्गीता एवं श्रीमद्भागवतम् के पाठ हेतु एकत्रित होते हैं। इनमें से अनेक हरे कृष्ण महामन्त्र की सोलह माला भी करते हैं, और कुछ तो बत्तीस भी। साथ-साथ जेल में वे अनेक कलाओं को भी सीख रहे हैं जिससे वे भविष्य में गुनाह किए बिना धनोपार्जन कर सकें।

इस्कॉन वृन्दावन की जेल प्रचार समीति के दीनबन्धु दास बताते हैं, ''जैसे ही उन्होंने हम सभी भक्तों को आते देखा, वे सभी हमें दण्डवत प्रणाम करने लगे। तत्पश्चात् उन्होंने जानकीनाथ दास द्वारा दिए प्रवचन को अत्यन्त ही ध्यानपूर्वक सुना।'' (२१ फरवरी २००९)

अमरीकी राष्ट्रपति ओबामा ने स्वीकारी श्रील प्रभुपाद की भगवद्गीता

अमरीका के ४४ वे राष्ट्रपति ओबामा ने अपने पुराने मित्र - श्रील प्रभुपाद की शिष्या कृष्णलौल्या दासी के भाई द्वारा भगवद्गीता की एक प्रति प्राप्त की। जब कृष्णलौल्या को पता चला कि उनके भाई ओबामा के २० जनवरी को हो रहे उद्घाटन महोत्सव में आमन्त्रित हैं, उन्होंने नये राष्ट्रपति को भगवद्गीता भेंट देने के लिए कहा। ''मेरी बहन आपको यह देना चाहती है,'' ओबामा को भगवद्गीता देते हुए उसने कहा। राष्ट्रपति ओबामा खुले विचारों एवं अनेक धर्मों को सम्मान देने हेतु जाने जाते हैं। ''हमारी मिश्रित संस्कृति हमारी कमजोरी नहीं अपितु शक्ति है,'' उन्होंने अपने २० जनवरी के उद्घाटन भाषण में कहा। ''हमारा राष्ट्र ईसाई, मुसलमान, यहूदी एवं हिन्दुओं का राष्ट्र हैं।''

भक्ति में अचलता

केवल बाह्य व्यवहार ही नहीं अपितु आन्तरिक शुद्धिकरण अचलता का प्रमुख लक्षण है।

–प.पू.शिवराम स्वामी

अकसर भक्त पूछते हैं कि अचलता का क्या अर्थ है – कुछ प्रतिदिन सोलह माला के जप और चार नियमों के पालन को अचलता मानते हैं, कुछ सेवा में अचलता को अचलता मानते हैं; और अनेक लोगों का अचलता के विषय में व्यक्तिगत मत है। किन्तु उपर्युक्त पहलु – नियमित जप और सेवा में नियमितता – शारीरिक लक्षण हैं और ये सच्ची अचलता को इंगित कर भी सकते हैं और नहीं भी।

वैदिक ग्रन्थ विभिन्न दृष्टिकोणों से अचलता के विषय को प्रस्तुत करते हैं। सच्ची अचलता क्या है? *नष्टप्रायेष्वभद्रेषु नित्यं भागवतसेवया* – ''नष्ट प्रायेषु,'' जब हृदय में बैठे विभिन्न प्रकार के अभद्र प्रायः अर्थात् लगभग नष्ट हो जाते हैं तो अचलता आती है। और 'प्रायः' का अर्थ क्या है? श्रील प्रभुपाद कहते थे ''७५%'', तो जब हृदय के लगभग ७५% अभद्र नष्ट हो जाते हैं तो भक्त आध्यात्मिक अचलता के ऐसे स्तर को प्राप्त करता है जो उसे श्रीकृष्ण के विषय में सोचने और श्रीकृष्ण के नामों का जप करने में सहायता करता है, क्योंकि उस समय उसका मन जप, सेवा या श्रीकृष्ण स्मरण से विभ्रान्त नहीं होता। क्यों? क्योंकि भक्त द्वारा अर्जित भक्ति की शक्ति की तुलना में हृदय में अभी भी बचे हुए अनर्थों का प्रभाव अत्यन्त दुर्बल रह जाता है।

तो जब हम अचलता की बात करते हैं तो हम हृदय में हुए एक विशिष्ट स्तर के शुद्धिकरण की बात करते है। श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुर के अनुसार उसके तीन लक्षण होते हैं – शारीरिक गतिविधियाँ, वाणी और मन की अचलता। सूक्ष्मता की दृष्टि से ये बढ़ते क्रम में हैं – सर्वाधिक सूक्ष्म प्रकार की अस्थिरता मन में पाई जाती है। अपने मन की जाँचकर एक भक्त जान सकता है कि उसका मन कितना स्थित है, कि बिना ध्यान भंग हुए वह कितनी सरलता से श्रीकृष्ण का स्मरण कर सकता

है और हरे कृष्ण का जप कर सकता है। इस स्थिति में कभी-कभी मन इधर-उधर भी जाता है किन्तु अधिकतर भक्त हरिनाम पर ध्यान लगाने में सक्षम रहता है। वाणी की स्थिरता से व्यक्ति अनावश्यक और निरर्थक वार्तालापों से बच पाता है। और शारीरिक कार्यों में अचलता का अर्थ है इंन्द्रियों पर नियंत्रण।

तो ये स्थिरता या अचलता के लक्षण हैं, किन्तु वास्तविक स्थिरता हृदय का ७५% शुद्धिकरण है। तकनीकी रूप से इसे निष्ठित भजनक्रिया कहा जाता है, अर्थात् जब व्यक्ति के भजन सम्बन्धित कार्य डगमगाते नहीं। श्रील प्रभुपाद इसे भक्ति में ''दृढ़ता'' भी कहते थे। और जैसाकि 'भजनक्रिया' शब्द से इंगित है कि भजन के दौरान होने वाली हमारी क्रियायें स्वयं हमें स्पष्ट दर्शायेंगी कि हम कितने स्थिर हैं।

उदाहरणार्थ, हम अकसर पायेंगे कि कोई अपनी सेवा में इतना पक्का है कि उसके पास सोलह माला जप करने का समय भी नहीं है, और यह अच्छा नहीं है। जब उस भक्त से कहा जाये कि आप एक स्थान पर बैठकर अपनी मालायें पूरी करो तो हम देखते हैं कि वे ऐसा नहीं कर पाते, उनका मन चंचल रहता है।

इसलिए शारीरिक कार्यों के दृष्टिकोण से कोई अत्यन्त स्थिर प्रतीत हो सकता है, किन्तु शायद यह उसकी भक्ति में दृढ़ता का परिणाम न होकर उसका अन्य गुण भी हो सकता है; हो सकता है स्वभाव से वह कर्त्तव्यपरायण हो। कोई व्यक्ति कर्त्तव्यपरायण है इसका अर्थ यह नहीं कि वह भक्ति में भी अवश्य दृढ़ होगा। यदि कोई भक्ति में दृढ़ होता है तो स्वाभाविक रूप से वह कर्त्तव्यपरायण होगा किन्तु इसका विपरीत सदैव लागू नहीं होता। जैसा मेरे एक अच्छे मित्र ने कहा था, ''मैं किसी भी व्यक्ति को उसके जप से जाँचता हूँ।''

तो यह निष्ठ-भजनक्रिया है - हरे कृष्ण का जप, श्रीमद्भागवतम् का श्रवण, वैष्णवों का संग और अर्चाविग्रहों की सेवा। और जब भक्त ध्यानपूर्वक इन कार्यों को करते हैं तो स्वाभाविक रूप से उनमें इन कार्यों के प्रति रुचि उत्पन्न होती है, और इसे स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। चाहे ऐसा क्यों न लगे कि वे अपने कर्त्तव्यों में इतने स्थिर नहीं हैं, फिर भी वे भक्त उन भक्तों से श्रेष्ठ हैं जो अपने कर्त्तव्यों में तो स्थिर दिखते हैं किन्तु जो भक्ति में स्थिर नहीं हैं। क्योंकि शारीरिक कार्यों की बाह्य रूप से नकल की जा सकती है, या पूर्वकर्मों के अनुसार किसी में वे गुण हो सकते हैं जो निष्ठा के लक्षण प्रतीत हों, किन्तु यदि उसके हृदय का शुद्धिकरण नहीं हुआ है तो वह भक्ति की अगली अवस्था रुचि तक प्रगति नहीं कर पायेगा।

भक्ति में स्थिर रहने के परिणामस्वरूप प्राप्त आध्यात्मिक लाभ का अर्थ है कि व्यक्ति बिना विभ्रमित हुए श्रवण-कीर्तन के कार्यों पर ध्यान केन्द्रित कर पाता है। इसलिए इन कार्यों को अपराधरहित होकर करने से व्यक्ति पूरा लाभ प्राप्त करता है। और वह है रुचि, अर्थात् *परम दृष्ट्वा निवर्तते।* उस समय व्यक्ति उच्चरस प्राप्त करता है और श्रीकृष्ण से सम्बन्धित कार्यों, उनके रूप, उनकी लीला आदि से आसक्त हो जाता है। अन्ततः यही परमसिद्धि के प्रवेशद्वार बनते हैं।

तो वैष्णवजन हृदय की शुद्धता अथवा स्थिरता को प्राप्त करने के लिए प्रयास करते हैं, क्योंकि उस स्तर से भक्ति में तीव्रता से प्रगति होती है। उस समय भक्त की प्रगति में कोई बड़ी समस्या बाधा नहीं डाल सकती और भक्त अविलम्ब भगवद्धाम की ओर अग्रसर होता है।

तो आईये अपनी भजनक्रिया के प्रति कर्त्तव्यनिष्ठ बनें, चाहे हम निष्ठित भी न हो, चाहे हम अस्थिर भी क्यों न हों, किन्तु यदि हम प्रयास करें और स्थिर भक्तों का संग करें, बुरी आदतों से बचें, भक्ति में आलस्य न करें, अपराध न करें, तो श्रवण-कीर्तन अत्यन्त शीघ्रता से हमारा शुद्धिकरण करेगा और उसके प्रमुख लाभस्वरूप हमारी भक्ति दृढ़ बन जायेगी।

जिस प्रकार एक पौधा कुछ समय पश्चात् न तो पेड़ होता है और न ही छोटा पौधा रहता है, किन्तु फिर भी वह अत्यन्त कोमल रहता है और सरलता से टूट सकता है। किन्तु धीरे-धीरे उसकी छाल आने लगती है, फिर वह भूरे रंग की होकर मजबूत बन जाती है और उस समय वह बिना किसी सहायता के खड़ा रह सकता है। यही स्थिति हमारी भक्ति की होगी जब हम अचलता या स्थिरता प्राप्त करेंगे। और यह, जैसा श्रील प्रभुपाद ने कहा, हृदय के ७५% अनर्थों से मुक्त होकर शुद्ध होने की अवस्था है।

शिवराम स्वामी श्रील प्रभुपाद के शिष्य हैं। वे इस्कॉन में एक गुरु एवं संचालन समिति जी.बी.सी. के सदस्य भी हैं।

एकलव्य पर अन्याय?

हम विवाद करते हैं कि द्रोणाचार्य ने एकलव्य पर अन्याय किया।
किन्तु उन्होंने ऐसा क्यों किया, क्या हमने कभी सोचा है?

– गोविन्द दास

(गतांक से आगे)

द्रोणाचार्य जब कुरुवंशियों को अस्त्र शस्त्र की विद्या सिखा रहे थे तो विविध देशों से अनेक राजकुमार भी उनसे प्रशिक्षण लेने के लिए वहाँ आने लगे। उनमें से एक था निषादराज हिरण्यधनु का पुत्र एकलव्य। किन्तु धर्मवेत्ता द्रोणाचार्य ने उसे अपना शिष्य स्वीकारने से स्पष्ट इंकार कर दिया। द्रोण द्वारा अस्वीकृत एकलव्य घर गया और द्रोणाचार्य की मिट्टी की एक मूर्ति बनाई। इस मूर्ति को अपना गुरु स्वीकारकर एकलव्य ने धनुर्विद्या सीखना आरम्भ किया। इस प्रकार अनेक दिनों तक कठोर अभ्यासकर एकलव्य धनुर्विद्या में पारांगत हो गया।

एक दिन पाण्डव एक कुत्ते को लेकर जंगल में शिकार खेलने गये। उसी वन में रहने वाले एकलव्य ने 'शब्दबेधी', अर्थात् केवल आवाज सुनकर बाण चलाने की कला का उपयोगकर कुत्ते की दिशा में सात बाण छोड़े। इन बाणों से कुत्ते को रत्तीभर भी हानि नहीं पहुँची, केवल उसका मुँह बन्द हो गया। एकलव्य का यह कौशल देख सभी पाण्डव अत्यन्त आश्चर्यचकित हो उठे। वे सभी एकलव्य के पास गये और उससे पूछा, ''धनुर्विद्या में इतनी कुशलता तुमने किससे सीखी?''

एकलव्य ने उन्हीं के गुरु द्रोणाचार्य का नाम लिया।

लौटकर पाण्डवों ने सारी घटना द्रोणाचार्य

को कह सुनाई। द्रोणाचार्य ने अर्जुन को वचन दिया था कि वह विश्व का सर्वश्रेष्ठ धनुर्धर होगा, किन्तु एकलव्य की धनुर्विद्या में दक्षता को देख उन्होंने एकलव्य से प्रत्यक्ष भेंट करने का निर्णय लिया।

''यदि तुम मुझे अपना गुरु मानते हो तो तुम्हें गुरु दक्षिणा देनी चाहिए?'' द्रोणाचार्य ने कहा।

एकलव्य तैयार था। ''आप जो कहेंगे मैं दूँगा।''

''मुझे तुम्हारे दाहिने हाथा का अँगूठा चाहिए!'' द्रोणाचार्य ने सभी को चौंका दिया।

बिना विचार किये एकलव्य ने अपने अँगूठे को हाथ से अलग कर दिया। परिणामस्वरूप वह केवल एक साधारण धनुर्धर रह गया।

एकलव्य का पूर्वजन्म

भारत में इस कथा की योग्य पार्श्वभूमि की जानकारी के अभाव में अकसर यह दर्शाया जाता है कि द्रोण और अर्जुन खलनायक हैं, और एकलव्य सच्चा नायक। लोग कहते हैं कि एकलव्य द्वारा अपने बल पर धनुर्विद्या में प्रवीणता देखकर द्रोणाचार्य ने गुरु-दक्षिणा के नामपर अँगूठे की माँगकर उसपर अन्याय किया। आईये वैदिक शास्त्रों के आधार पर इस वाद को मिटाने का प्रयास करें।

एकलव्य का जन्म यद्यपि एक क्षत्रिय परिवार में हुआ था, किन्तु कारणों से उसका पालन-पोषण निषादराज हिरण्यधनु ने किया। उनके पिता देवश्रव भगवान् वासुदेव के भक्त थे। इसका उल्लेख 'हरिवंश' ग्रन्थ में दिया गया है। श्रीपाद मध्वाचार्य एकलव्य के पूर्वजन्म के विषय में लिखते हैं -

अंशेनयो भुवमगान्मणिमानितिस्म।
स क्रोधतंत्रकगणेष्वधिपोनिषाधः।।

अर्थात्, ''एकलव्य अपने पूर्व जन्म में अत्यन्त क्रोधित और राक्षणगणों का अधिपति था। इस कुप्रसिद्ध असुर का नाम था मणिमान।''

एकलव्य के मन में सर्वश्रेष्ठ धनुर्धर बनने की इच्छा थी। इसके लिए उसने पिशाचों के पास भी जाकर शस्त्राभ्यास किया था। इससे हम देख सकते हैं कि शस्त्रविद्या सीखने के लिए एकलव्य किसी के पास भी जाने के लिए तैयार था। इसीलिए द्रोणाचार्य ने उसे अपना शिष्य नहीं बनाया, इसलिए नहीं कि वह नीच कुल से था। चूँकि एकलव्य को क्षत्रिय संस्कार नहीं मिले थे उसका अपने युद्धकौशल पर घमण्ड होना स्वाभाविक था। इसी भय से द्रोणाचार्य ने उसे शस्त्रविद्या सिखाने से इंकार कर दिया।

पूर्वकाल में योग्य संस्कार प्राप्त हुए व्यक्ति को कोई भी ज्ञान दिया जा सकता था। संस्कार हीन व्यक्ति को ज्ञान देने पर भी उसका सही उपयोग होने की सम्भावनायें नहीं होती। ऐसा करना आतंकवादियों को परमाणु अस्त्र निर्माण करने का ज्ञान देने के समान है, जो सामान्य जनता के हित में नहीं है। एकलव्य में क्षत्रिय संस्कार न होने के कारण द्रोणाचार्य ने उसे शस्त्रविद्या नहीं सिखाई और अन्त में उसके दाहिने हाथा का अँगूठा गुरुदक्षिणा में माँग लिया। इसीलिए श्रीकृष्ण ने एकलव्य को युद्धभूमि के बाहर ले जाकर उसका वध किया।

एकलव्य की बात तो दूर, पाण्डवों की ओर से लड़ने वाले घटोत्कच की मृत्यु होने पर श्रीकृष्ण अत्यन्त आनन्दित थे। पाण्डवों ने उनसे पूछा, ''अपने पक्ष के योद्धा की मृत्यु पर आप इतने आनन्दित क्यों हैं?''

इसपर श्रीकृष्ण ने उत्तर दिया, ''घटोत्कच कितना भी पराक्रमी क्यों न था, था तो वह राक्षस ही। और इसलिए भविष्य में वह कभी भी धोखा दे सकता था।'' इसलिए किसी भी घटना के पीछे छिपे तथ्यों को न देखते हुए किसी भी निष्कर्ष पर पहुँचना नास्तिकवाद बढ़ाने में मदद करता है।

पात्रता की आवश्यकता

द्रोणाचार्य स्वयं अपने पुत्र अश्वत्थामा को ब्रह्मास्त्र चलाने का ज्ञान देने के लिए तैयार नहीं थे, क्योंकि उस अस्त्र का उपयोग कहाँ और किसलिए करना चाहिए, उसे इसका ज्ञान नहीं था। केवल अपने पुत्र के प्रति स्नेह के कारण उन्होंने अश्वत्थामा को ब्रह्मास्त्र चलाने का ज्ञान दिया। भविष्य में सभी ने उसके दुष्परिणाम देखे।

कलियुग में शिक्षा और उसके लिए आवश्यक व्यक्तित्व को अधिक महत्व नहीं दिया जाता। इसी कारण आजकल के शिक्षक शिक्षा देते समय शिष्य की पात्रता का बिल्कुल ध्यान नहीं करते। परिणामस्वरूप अनेक लोग उस विद्या का दुरुपयोगकर समाजनाशक कार्य करते हैं। कुछ वर्षों पूर्व अमरीका के विमान चालक प्रशिक्षण महाविद्यालय में कुछ आतंकवादी आ मिले। इसका परिणाम क्या हुआ? उन्होंने विश्व की सर्वाधिक ऊँची इमारतों में से दो इमारतों को विमानों से ढह गिराया, जिसमें ७,००० लोगों की मृत्यु हुई।

एकलव्य धनुर्विद्या में पटु था, किन्तु इस कला द्वारा धर्म की स्थापना करने की उसकी कोई इच्छा नहीं थी।

इसलिए व्यक्ति किस इच्छा से कोई विशेष शिक्षा लेना चाहता है, यह जानना अत्यन्त महत्वपूर्ण है। एकलव्य धनुर्विद्या में पटु था, किन्तु इस कला द्वारा धर्म की स्थापना करने की उसकी कोई इच्छा नहीं थी। यह जानते हुए सभी धर्मों के ज्ञाता श्रीकृष्ण ने उसका वध कर दिया। श्रील प्रभुपाद के गुरु महाराज श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर ने सम्पूर्ण भारत में ६४ गौड़ीय मठों की स्थापना की। उन्होंने नीच कुल में जन्म लिये लोगों का भी शुद्ध

(शेष भाग पृष्ठ १३ पर)

उलझनों से उत्तरों तक

एक पारम्पारिक दक्षिण भारतीय परिवार में पली-बढ़ी एक युवती अपने परिवार द्वारा की जाने वाली पूजा-पाठ के पीछे महत्वपूर्ण सत्यों को जानने का प्रयास करती है।

– श्रीविद्या बालाजी

कृष्णभक्ति मेरे लिए कोई नया विषय नहीं था, क्योंकि मेरा जन्म मध्व सम्प्रदाय से जुड़े एक रुढ़िवादी भारतीय परिवार में हुआ था। मैं ऐसी चारदीवारी में पली-बढ़ी जहाँ पूजा-पाठ ही जीवन की प्रमुख शैली थी। घर में विद्यमान भगवान् श्रीकृष्ण के विग्रह परिवार के सर्वाधिक महत्वपूर्ण सदस्य थे। सुबह के दूध के गिलास से लेकर रात्रि के भोजन तक, प्रत्येक वस्तु पहले उन्हें अर्पित की जाती। भगवान् को अर्पित किये बिना किसी को कुछ भी खाने की अनुमति नहीं थी।

प्रातः भगवान् को जगाने के लिए हम सभी सुप्रभातम् भजन गाते। बाद में मेरी माँ श्रीकृष्ण के नामों का कीर्तन करते-करते भोजन पकाती। तब पिताजी पुष्प और प्रार्थनाओं के साथ अपनी व्यक्तिगत पूजा करते। तत्पश्चात् भगवान् को नैवेद्यम् लगाया जाता। संध्या समय मेरे माता-पिताजी घर के मंदिर में दीपक जलाते और मन्त्रोच्चार करते। भगवान् को दूध का भोग लगाकर और गीत गाते-गाते उन्हें सुलाकर दिन समाप्त हो जाता।

श्रीविद्या बालाजी अपने पति श्रीमुत्थुकुमारन के साथ

इस दिनचर्या को देखते-देखते मैंने युवावस्था में प्रवेश किया। मेरे अन्दर का बचपना कौतुहल करने लगा। आधुनिक शिक्षा ने मुझे सन्देह और प्रश्न पूछने के लिए प्रेरित किया।

आरम्भिक जिज्ञासा

पुण्यवान परिवार में जन्म लेना लाभदायक है। किन्तु केवल इतना ही पर्याप्त नहीं है। श्रीकृष्ण स्वयं भगवद्गीता में पुष्टि करते हैं कि अन्ततः वे ही लोगों को वह बुद्धि प्रदान करते हैं जिससे वे उनतक पहुँच सकते हैं। जब तक वे बुद्धि प्रदान नहीं करते, परिवर्तन नहीं होता।

और यही हुआ मेरे साथ भी। जबतक भगवान् ने मुझे यह जानने की उत्कण्ठा नहीं दी परमशक्ति कौन है, मैं कट्टर थी कि धार्मिक कार्य समय और धन दोनों का अपव्यय है। किन्तु भगवान् ने मेरे मन में वे प्रश्न जगाये जिनके कारण मैं अपनी आध्यात्मिक धरोहर की सराहना कर पाई।

उत्तर की खोज में

अपने प्रश्नों के उत्तरों की खोज में मैं अपने पिता के पास गई, जिन्हें मैं आध्यात्मिक विषय में विद्वान् मानती थी। मेरे प्रश्न थे –

१. हमारी सच्ची पहचान क्या है?

२. हमारा परिवार घर पर ये सब कर्मकाण्ड क्यों करता है?

३. हमारी पूजा किस प्रकार समाज की सहायता करती है?

उन्होंने सहजता से उत्तर दिये –

१. हम श्रीपाद मध्वाचार्य के अनुयायी हैं, जिन्होंने सिखाया कि जीवात्मायें भगवान् का अंश हैं।

२. घर पर होने वाले कर्मकाण्ड निरर्थक नहीं हैं, अपितु मानव जीवन के मूलभूत आधार हैं।

३. इन कर्मकाण्ड का आयोजन, जीवन के अन्य कार्यों के साथ, सम्पूर्ण समाज की सहायता करता है।

मेरे मन को शान्त करने की अपेक्षा इन उत्तरों ने और प्रश्नों को जन्म दे दिया।

''मध्वाचार्य क्यों भगवान् नारायण को ही परम भगवान् कहते हैं?'' मैंने कहा। ''कहाँ ये प्रमाण हैं कि जीवात्मा और परमात्मा भिन्न हैं? किस प्रकार शास्त्रोचित जीवन समाज की सहायता कर सकता है?''

मेरे पिता ने उत्तर दिया, ''सत्य की खोज की जानी चाहिए। मैं तुम्हें इन प्रश्नों के उत्तर खोजने के लिए प्रोत्साहित करता हूँ। जितनी पुस्तकें पढ़ सकती हो पढ़ो। अपने मन की सलाह लो। अन्दर झाँककर देखो, और मुझे बताओ तुम्हें क्या मिला।''

यह मेरे विद्रोही मन के लिए सर्वोत्तम सलाह हो सकती थी।

तब से मैंने विभिन्न पुस्तकें पढ़ी किन्तु मुझे अपने प्रश्नों का संतोषजनक उत्तर नहीं मिला। युवावस्था, आसपास के वातावरण, और भौतिकवादी शिक्षा ने मुझे गहराइयों तक उलझन में डाल दिया था। दक्षिण भारत एक परिवर्तन से गुजर रहा था। राजनेता भर्त्सना कर रहे थे कि आध्यात्मिकता या भगवान् से सम्बन्धित कुछ भी ''पिछड़ा'' और ''दकियानूसी'' था। सबकुछ अस्तव्यस्त था। मेरा अपरिपक्व मन नहीं जानता था कि किसे पकड़ूँ और किसे जाने दूँ।

भगवद्गीता और श्रील प्रभुपाद की पुस्तकों से भेंट

मैंने अनेक पुस्तकें पढ़ीं, किन्तु इन्होंने मेरी उलझन को और ही बढ़ाया और मुझे पहले से अधिक प्रश्नों की ऊहापोह में डाल दिया। मैं अपने पिताजी के पास गई और पुनः उनसे सहायता माँगी। उन्होंने पूछा कि क्या मैंने भगवद्गीता पढ़ी है।

नहीं, मैंने उत्तर दिया।

उन्होंने कहा कि यह अच्छा हुआ कि मैंने स्वयं इसे पढ़ने का प्रयास नहीं किया, क्योंकि इस शास्त्र में यद्यपि मेरे सभी प्रश्नों के उत्तर हैं, इसका अध्ययन एक उचित विधि द्वारा करना चाहिए, जिससे मैं मनुष्य जीवन का सच्चा लक्ष्य जान सकूँ। उन्होंने कहा कि वे इस्कॉन के किसी भक्त की व्यवस्था करेंगे जो मुझे भगवद्गीता सिखाये। हमारे घर में प्रत्येक रविवार शाम को छोटा-सा कार्यक्रम होता। वह अपने प्रश्नों के उत्तर प्राप्त करने का एक उपयुक्त अवसर था; और साथ ही साथ मनोरंजक भी।

मेरे जीवन में यह सबसे अच्छी बात हुई। उन कक्षाओं ने मेरे मन को कृष्णभावना के प्रति खोल दिया और मेरा परिचय महान् आध्यात्मिक गुरु श्रील प्रभुपाद और उनकी पुस्तकों से करवाया।

उत्तर

मैं सोच रही थी कि जिस इस्कॉन शिक्षक को मेरे पिताजी ने आमन्त्रित किया था वे कोई बड़ी उम्र के होंगे। उनके स्थान पर एक युवा स्त्री श्रील प्रभुपाद की भगवद्गीता यथारूप लेकर आई। उन्होंने भगवान् के मंदिर के समक्ष प्रार्थनायें अर्पितकर मुस्कुराहट के साथ आरम्भ किया। वे केन्द्रित, प्रसन्न, और स्पष्ट प्रतीत होती थीं। न जाने क्यों मैंने विश्वास का अनुभव किया कि मेरी सभी शंकायें दूर होने वाली थीं।

जैसे ही उन्होंने कक्षा आरम्भ की, मैंने रोकते हुए उनसे पूछा यदि मैं कुछ प्रश्न पूछ सकती थी। मेरी सहायता करने में उन्हें प्रसन्नता हो रही थी। तत्पश्चात् हुई बातचीत के दौरान मेरा जीवन सदा-सदा के लिए बदल गया, और एक उल्लासभरा अनुभव एवं प्रेमभरी यात्रा बन गया।

जबतक भगवान् ने मुझे यह जानने की उत्कण्ठा नहीं दी परमशक्ति कौन है, मैं कट्टर थी कि धार्मिक कार्य समय और धन दोनों का अपव्यय है।

शिक्षक – क्या तुम भगवान् में विश्वास करती हो?

मैं – हाँ।

शिक्षक – क्या तुम्हें विश्वास है कि श्रीकृष्ण ही परम भगवान् हैं?

मैं – मैं उलझन में हूँ। मैं इस प्रश्न का उत्तर नहीं दे सकती। मैं जानना चाहती हूँ कि परम भगवान् कौन हैं।

शिक्षक – परम भगवान् को जानने के लिए तुम्हें वेदों और उपनिषदों के पास जाना होगा। ये मूलभूत शास्त्र हैं जो स्पष्टता से वर्णन करते हैं कि कौन भगवान् है। भगवद्गीता ऐसा ही उपनिषद् है जो सत्य का वर्णन करता है। श्रील प्रभुपाद ने भगवद्गीता ''यथारूप'' दी है, जो सभी मनोकल्पनाओं और व्यक्तिगत मतों से मुक्त है। मैं सलाह दूँगी कि तुम अन्य कोई भगवद्गीता

पढ़ने की अपेक्षा इसे पढ़ो। अभी मुझे बताओ की तुम भगवद्गीता के विषय में क्या जानती हो।

मैं – यह ग्रन्थ सभी के लिए है, जैसे बाईबल और कुरान।

शिक्षक –बिल्कुल सही। तो यदि एक पवित्र ग्रन्थ में भगवान् श्रीकृष्ण स्वयं घोषणा करते हैं कि वे सभी कारणों के कारण हैं और पूरे संसार को दिखाते हैं कि वे सर्वश्रेष्ठ हैं, क्या तुम उसपर विश्वास करोगी?

मैं – हाँ।

शिक्षक –अब तुम भगवान् से सुनने जा रही हो। भगवान् श्रीकृष्ण गीता के माध्यम से सभी से बात कर रहे हैं। इस प्रसंग में मध्यस्थ हैं महान् आध्यात्मिक गुरु श्रील प्रभुपाद। मैं यहाँ सभी से निवेदन करती हूँ कि इनके द्वारा एवं इनके जीवन पर लिखी पुस्तकें पढ़ें, यह जानने के लिए कि इस्कॉन है क्या।

मैं – इससे पहले हम आरम्भ करें, मैं कुछ और प्रश्न पूछना चाहूँगी जो मेरे मन में हैं। भगवान् की भक्ति क्यों महत्वपूर्ण है? उन्हें खिलाकर और उनकी सेवा करने से हमें क्या मिलता है? क्या इससे समाज का कोई लाभ होता है?

शिक्षक –श्रीकृष्ण को हमारी सेवायें नहीं चाहिए। कृष्णभावना की पूरी पद्धति इसलिए बनाई गई है जिससे हम अन्ततः भगवद्प्रेम विकसित कर सकतें, जैसा कि श्रीचैतन्य महाप्रभु ने सिखाया है। भगवान् के निकट जाने का पहला पग उनके प्रति प्रेम विकसित करना है। क्या तुम अपने माता-पिता की सेवा करती हो?

मैं – हाँ।

शिक्षक –जिस प्रकार हम अपने माता-पिता और प्रियजनों की सेवा करते हैं, हम श्रीकृष्ण को भी अपना पारिवारिक सदस्य बनाने का प्रयास करते हैं। इससे हम उनके प्रति तीव्र प्रेम विकसित करते हैं, जो शीघ्रातिशीघ्र जन्म-मृत्यु के चक्र से हमें मुक्तकर उनके पास लौटने में हमारी सहायता करता है।

तुमने पूछा है कि यह किस प्रकार समाज का कल्याण करता है। मैं समझाती हूँ। तुम यह देखते हुए बड़ी हुई हो कि कैसे तुम्हारे माता-पिता पूजा-पाठ करते हैं। चाहे तुम्हें इन्हें मानो या नहीं, जब भी तुम कोई फल या मिठाई खाती हो तुम्हारा हाथ स्वतः भगवान् की ओर ओर उसे अर्पित करने के लिए बढ़ जाता है, सही है?

मैं – हाँ।

शिक्षक –तुम्हारी माँ ने भक्ति के नियमों से तुम्हारा पालन किया है। उन्होंने तुम्हारे लिए आध्यात्मिक वातावरण का निर्माण किया। यदि तुम्हें माँस खाने या शराब पीने का अवसर भी मिले फिर भी तुम वैसा नहीं करोगी क्योंकि बचपन से ही ये वस्तुएँ तुम्हारे अस्तित्त्व में नहीं हैं।

मैंने प्रश्न पूछना समाप्त किये। जैसे-जैसे हमने उस पवित्र ग्रन्थ के पन्ने पलटे और कक्षा आरम्भ की, मैंने अनेक वस्तुओं को खो दिया और कुछ को पाया।

मैं – हाँ सही है।

शिक्षक –तो कल्पना करो प्रत्येक गृहस्थ इन नियमों का पालन करे, प्रत्येक नागरिक इन विचारों को अपनाये और एक सुन्दर समाज का निर्माण करे। माँसाहार, नशा, जुआ, और व्यभिचार हमारी चेतना को आच्छादित कर देते हैं, और तब विवेक बुद्धि नष्ट हो जाती है। यही मूल कारण है समाज में सभी अपराधों और बुरे तत्त्वों के पीछे। तो अब तुम्हें समझ में आया कि कैसे ये नियम समाज को लाभान्वित करते हैं?

मैं – हाँ। मेरे माता-पिता ने मुझे बताया कि हम श्रीपाद मध्वाचार्य की शिक्षाओं का पालन करते हैं, जो कहते हैं कि जीवात्मा और परमात्मा अथवा भगवान् भिन्न हैं। किन्तु मैं अन्य दर्शनों में पढ़ती हूँ जो कहते हैं कि अन्त में हम भगवान् के साथ एक हो जाते हैं। क्या आप इसे समझा सकती हैं?

शिक्षक –अच्छा हुआ कि तुम ही इस विषय को ले आईं। श्रील प्रभुपाद की शिक्षायें ब्रह्म-मध्व-गौड़ीय परम्परा पर आधारित हैं। उनकी शिक्षायें प्रामाणिक हैं, केवल कल्पना अथवा मानसिक चिन्तन नहीं। तुम्हारे प्रश्न का उत्तर है कि तुम अपनी ''सामान्य बुद्धि'' का प्रयोग करो। क्या तुम एक भी ऐसी वस्तु बना सकती हो जो भगवान् ने बनाई है? क्या तुम प्रयोगशाला में अमीबा बना सकती हो?

मैं – नहीं।

शिक्षक –तो यह सिद्ध करता है कि तुम सीमित और आश्रित हो। भगवान्, दूसरी ओर, सभी कारणों के परम कारण हैं। वे भगवद्गीता के ग्यारहवें अध्याय में अपना विराट् रूप दिखाते हैं कि वे प्रत्येक वस्तु में हैं और प्रत्येक वस्तु उनमें है। तो तुम, मैं, और पृथ्वी पर रहने वाले सभी प्राणी आश्रित हैं और भगवान् से भिन्न हैं। परमात्मा विशेष हैं और अपनी असीमित शक्तियों के कारण सबसे अलग हैं। यद्यपि हम सीमित हैं, हम भक्तियोग द्वारा उनकी कृपा प्राप्त कर पुनः उनके पास आ सकते हैं, फिर से कभी इस भौतिक संसार में न लौटने के लिए।

सही पथ पर

मैं आश्चर्यचकित रह गई। एक युवा स्त्री ऐसे तर्कों द्वारा सर्वोच्च सत्यों को इतनी सरलता से समझा सकती है। कैसे वे इतनी स्पष्ट और बुद्धिमान् बनीं? मैं समझ गई कि ये श्रील प्रभुपाद की शिक्षायें थी।

मैंने प्रश्न पूछना समाप्त किये। जैसे-जैसे हमने उस पवित्र ग्रन्थ के पन्ने पलटे और कक्षा आरम्भ की, मैंने अनेक वस्तुओं को खो दिया और कुछ को पाया। मैंने चिन्ता, शंकाओं, तनाव, और क्रोध को खो दिया। जिन कुछ वस्तुओं को मैंने पाया वे ऐसे स्तम्भ थे जिनका

सहारा लेकर में आगे बढ़ने वाली थी। मैंने विश्वास पाया – भगवान् श्रीकृष्ण में दृढ़ विश्वास। मैंने आनन्द पाया, प्रत्येक आत्मा की स्वाभाविक स्थिति। और मैंने दृष्टिकोण पाया – ऐसे सही विचार जो जीवन, एवं मृत्यु के पश्चात् के जीवन का वर्णन करते हैं।

भगवद्गीता में भगवान् कहते हैं कि भक्तों के लिए, ''मैं उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति करता हूँ, और उनके पास जो है उसका संरक्षण करता हूँ।'' श्रीकृष्ण ने मुझे क्या प्रदान की? श्रद्धा। और उन्होंने किसका संरक्षण किया? मेरे अन्दर की आध्यात्मिक उत्कण्ठा का। मैं श्रीकृष्ण को धन्यवाद देती हूँ कि उन्होंने मुझे श्रील प्रभुपाद से मिलवाया; अन्य शिक्षक निश्चित ही मुझे भ्रमित कर देते। मैं भगवान् को बार-बार धन्यवाद देती हूँ मुझे सर्वोत्तम शिक्षक देने के लिए, जो उनतक मेरा मार्गदर्शन कर सकता है।

अब में श्रील प्रभुपाद की अनेक पुस्तकें पढ़ रही हूँ। मैं वह सर्वोच्च प्रेम विकसित कर रही हूँ जिसे श्रीचैतन्य महाप्रभु ने अपने जीवन से दिखलाया।

मैं अभी भी छात्रा हूँ। किन्तु अभी मैं एक साहसी छात्रा हूँ जो पूरे आत्मविश्वास से कह सकती है, ''मैं सही मार्ग पर हूँ।

(पृष्ठ ९ का शेष भाग)

भक्ति के ज्ञान द्वारा योग्य संस्कार कर उन्हें ब्राह्मण दीक्षा दी। वे एकलव्य के विषय में कहते कि यदि एकलव्य सच्चा गुरु सेवक होता तो उसे अपने गुरु की आज्ञा का पालन करना चाहिए था (जब द्रोणाचार्य ने उसे अस्त्रविद्या सिखाने से मना कर दिया था।) 'मैं भी द्रोणाचार्य का शिष्य हूँ', पूरे जगत् में यह दिखाने के लिए उसने उनकी मूर्ति बनाकर उसकी पूजा की।

एकलव्य ने बिना विचार किये अपना अँगूठा काट दिया, इसपर भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर कहते हैं – ''सभी शास्त्रों के दृष्टिकोण से देखा जाये तो वह गुरुभक्ति थी ही नहीं। लोगों ने केवल उसकी नैतिकता को महत्व दिया है। यदि उसके कार्य भगवान् को प्रसन्न करने वाले होते तो फिर क्यों भगवान् उसका वध करते? यह कथा भगवान् राम द्वारा वेदाध्ययन करने वाले शूद्र का वध करने के समान है। श्रीचैतन्य महाप्रभु ने हमें सिखाया है कि व्यक्ति के बाह्य कार्यों को देखकर हम उसे नहीं समझ सकते। उन कार्यों के पीछे उसका उद्देश्य क्या है, वह अधिक महत्वपूर्ण है।

निष्कर्ष यह है कि एकलव्य पर उसकी जाति के कारण कोई अन्याय नहीं हुआ, उसके हृदय में भौतिक दृष्टि से महान् बनने की इच्छा समाज के लिए घातक थी। जिसे देखकर द्रोणाचार्य ने उसे अस्वीकार किया और सबसे महत्वपूर्ण यह कि धर्म की स्थापना करने वाले भगवान् श्रीकृष्ण ने उसका वध किया।

गोविन्द दास इस्कॉन चौपाटी, मुम्बई में रहते हैं और वहाँ अध्यक्ष समिति के एक सदस्य हैं।

बी.टी.जी. यात्रा सेवा की

चार धाम यात्रा २००९

उत्तरांचल की शोभा बढ़ाने वाली गड़वाल हिमालय की बादलों से ढकी गगनचुंबी चोटियाँ, आध्यात्मिक अनुभव प्राप्त करने वाले जिज्ञासुओं की प्रतीक्षा में हैं।

इन्हीं सुन्दर पर्वतमालाओं के बीच स्थित हैं भारत के चार सर्वाधिक पवित्र स्थल – यमुनोत्री, गंगोत्री, श्रीकेदारनाथजी और श्रीबद्रीनाथजी। सदियों से परमसत्य की खोज में साधु और सन्तों ने इन गूढ़ घाटियों में भ्रमण किया है। यमुनोत्री, गंगोत्री, श्रीकेदारनाथ और श्रीबद्रीनाथ समस्त तीर्थों में सर्वाधिकपवित्र हैं। इनकी यात्रा न केवल व्यक्ति के पापों को धो डालेगी अपितु निश्चित ही उसे जन्म-मृत्यु के चक्र से मुक्त भी करेगी। इन स्थलों की यात्रा के लाभ अवर्णननीय हैं। कहा जाता है कि इन्हीं स्थलों पर पृथ्वी और स्वर्ग का मिलन होता है, और यहाँ जन्म लेने अथवा शरीर त्यागने का वरदान विरलों को ही प्राप्त होता है।

दिनांक – १० मई से २४ मई २००९यात्रा दिल्ली से आरम्भ और समाप्त होगी
शुल्क – १८,९०० प्रति व्यक्ति (इसमें रहने, प्रसाद एवं बस द्वारा आंतरिक यात्रा का समावेश है)
अधिकतम सीटें – ४०

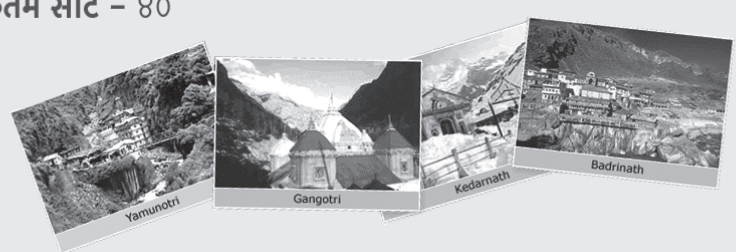

कर्मों का अचूक न्याय

यद्यपि ''कर्म'' शब्द का प्रयोग दैनिक भाषा का आम शब्द है, केवल कुछ ही लोग इसके परिणामों की गम्भीरता से परिचित हैं।

– चैतन्य चरण दास

''मैं ही क्यों? मैंने ऐसा क्या किया है जो मेरे साथ ऐसा हो रहा है?'' स्वयं को अन्यायपूर्ण ढंग से क्रूर ईश्वर द्वारा तिरस्कृत एवं उपेक्षित अनुभव कर वह व्यक्ति उग्रतापूर्वक चीख उठता है। 'अच्छे लोगों के साथ बुरा क्यों होता है?' एक ऐसा प्रश्न है जो हमें प्रायः तब सताता है जब हम सच्चरित्र लोगों को जीवन में कष्टपूर्ण आपदाओं का शिकार होते देखते हैं। 'शैतान की समस्या' पाश्चात्य आध्यात्मवादियों एवं विचारकों के लिए सैकड़ों वर्षों से अभिशाप बनी हुई है। सरल शब्दों में समस्या यह है कि 'एक सर्वशक्तिमान् भगवान् के होते हुए भी इस संसार में बुराई क्यों है?''

वैदिक ग्रन्थ 'शैतान की समस्या' की एक स्पष्ट समझ प्रदान करते हैं। वे वर्णन करते हैं कि हमारे साथ बुरा हमारे अपने दुष्कृत्यों के कारण होता है। यह कर्म कहलाता है। किन्तु जब हमारे हिस्से का कष्ट हमें मिलता है तब तक हम पूर्व में किये गये अपने कुकृत्यों को भूल चुके होते हैं। ''मैं ही क्यों?'' – इस क्रोधपूर्ण आवेग का यही कारण है।

कर्म - पूर्णतः अपरिचित नहीं

संजीव अपने घर लौटता है और अपने पिता के दायें हाथ पर बुरी तरह जले हुए घाव का चिह्न देखता है। स्तब्ध होकर वह चीखता है – ''पिताजी, क्या हुआ यह?''

एक सुबह श्रीमती चौहान अपने घरेलु चिकित्सक को फोन करती है – ''डॉक्टर, मेरे पेट में भयंकर पीड़ा हो रही है।'' चिकित्सक तुरन्त पूछता है – ''कल रात्रि भोजन में आपने क्या खाया था?''

राहुल को श्वास सम्बन्धी समस्यायें आ रही हैं। उसका निरीक्षण करके डॉक्टर पूछता है – ''तुम किस उम्र से धूम्रपान कर रहे हो?''

ये सरल दैनिक घटनायें 'कर्म के नियमों' से मिलते-जुलते विचारों की स्वीकृति की ओर ही इंगित करती हैं। एक विशेष प्रभाव देखकर हम प्रायः उसका कारण जानना चाहते हैं। कर्म का सिद्धान्त भी यही विषय प्रस्तुत करता है - प्रत्येक क्रिया की एक (विपरीत किन्तु समान) प्रतिक्रिया होती है। कर्म का नियम भी न्यूटन के तीसरे नियम के समान ही है, किन्तु वह भौतिक स्तर पर नहीं अपितु गूढ़ एवं सूक्ष्म विषयों जैसे उच्चशक्तियों एवं लौकिक न्याय के स्तर पर कार्य करता है। फिर भी जिस प्रकार न्यूटन का नियम केवल कोरा विश्वास न होकर भौतिक विज्ञान का एक सिद्धान्त है, उसी प्रकार कर्म भी उच्च आयामी विज्ञान का एक सिद्धान्त है।

रहस्यमय संसार

कर्म दुःखों की एक सरल, तर्कयुक्त एवं संन्तोषप्रद व्याख्या है, किन्तु प्रायः हमारे निरीक्षण इसे प्रामाणित करते हुए प्रतीत नहीं होते। भ्रष्ट राजनीतिज्ञ बिना सजा पाये अथाह सम्पत्ति एकत्रित कर लेते हैं। दुष्ट अपराधी अन्डरवर्ल्ड सरगना के रूप में शान से जीते हैं। धूर्त व्यवसायी जो गैरकानूनी ढंग से करोड़ों रुपये कमाते हैं, सफलता के प्रतीक समझे जाते हैं। दूसरी ओर धर्म और सत्य के प्रति दृढ़प्रतिज्ञ लोग उपेक्षित रह जाते हैं, निर्दोषों को सजा मिलती है, ईमानदार लोग गरीबी में कष्ट उठाते हैं। न्याय है कहाँ?

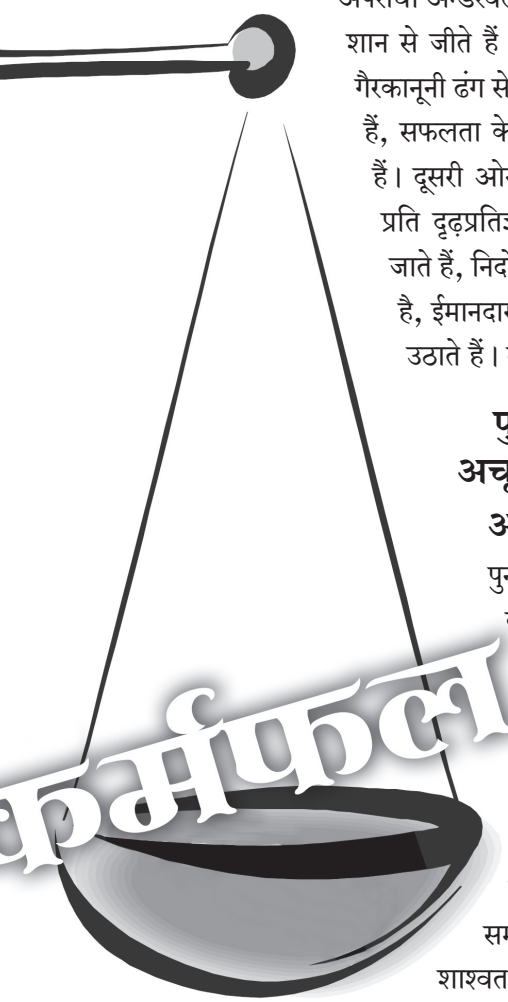

पुनर्जन्म - अचूक न्याय की आधारशिला

पुनर्जन्म वैदिक शास्त्रों का एक अभिन्न अंग है, जो विरोधाभासी प्रतीत होते कर्म के नियमों को स्पष्ट करता है। सर्वप्रथम हमें समझना होगा कि हम शाश्वत हैं - हमारा जीवन जन्म से प्रारम्भ एवं मृत्यु पर अन्त नहीं होता। भगवान् कृष्ण भगवद्गीता में कहते हैं कि जिस प्रकार एक व्यक्ति पुराने वस्त्रों को त्यागकर नये वस्त्र धारण करता है, उसी प्रकार हम आत्मायें जीर्ण शरीरों को त्यागकर मृत्यु के समय एक नया शरीर धारण करते हैं। यही पुनर्जन्म है।

हम आत्मायें, शरीर में सक्रिय चेतना के रूप में अपने सभी अच्छे और बुरे कर्मों के लिए उत्तरदायी हैं। अतएव हमें इस जन्म में अथवा आगामी किसी जन्म में अपने कर्मों का फल भुगतना ही होगा। अतः ऊपरी तौर से सच्चरित्र व्यक्ति यदि अत्यधिक कष्ट भोग रहा है तो वह अपने इस अथवा किसी पूर्वजन्म में किये गये बुरे कर्मों के फल भोग रहा है। इसके विपरीत एक बुरा व्यक्ति अपने पूर्व के सद्कर्मों के कारण अस्थाई सुख का भोग कर सकता है।

कर्म के नियम की व्यवस्था को स्पष्ट करने में यह उपमा सहायक हो सकती है। गाँवों में अनाज प्रायः विशाल ऊर्ध्वाधर पात्रों में एकत्र किया जाता है। नया अनाज पात्र में ऊपर से भरा जाता है एवं पुराना अन्न पात्र के निचले हिस्से से आवश्यकतानुसार निकाला जाता है। एक किसान ने पिछले चार वर्षों तक लगातार निम्नस्तरीय अनाज उत्पन्न किया और इसे पात्र में भरता रहा। इस वर्ष वह उच्चस्तरीय अन्न उत्पन्न करता है और उसे पात्र में सबसे ऊपर भरता है। जब वह पात्र से अन्न निकालता है तो पात्र के तले से निम्नस्तरीय अनाज ही बाहर आयेगा, जिसे देखकर वह हतोत्साहित एवं क्रुद्ध हो सकता है। इससे स्पष्ट होता है कि क्यों निर्दोष दिखने वाले व्यक्ति इस जीवन में कष्ट उठाते हैं।

क्या अच्छे लोगों के साथ बुरी घटनायें होती हैं?

कर्म के सिद्धान्त के क्रियान्वयन को समझना कठिन इसलिए है क्योंकि ऐसा नहीं है कि किसी व्यक्ति के कर्मों का लेखा-जोखा या तो पूरा अच्छा होगा या पूरा बुरा। नहीं। अधिकांश लोगों के लेखे-जोखे में अकसर दोनों का मिश्रण होता है। ऐसे मिश्रित लेखे-जोखे का परिणाम प्रायः अनियंत्रित प्रतीत होता है। किसी भले व्यक्ति पर विपत्ति आती देख प्रायः लोगों को एक प्रश्न सताता है - ''यदि यह व्यक्ति अपने पूर्वजन्म में इतना बुरा था कि तब किये गये पापों के लिए उसे इस जीवन में इतना भीषण कष्ट भुगतना पड़ रहा है, तो क्या उसने इस जन्म में भी अपने पूर्वजन्म के पापमय आचरण को क्यों जारी नहीं रखा?'' यदि वे अपने पूर्वजन्मों में पापी थे तो कैसे वे इस जन्म में सच्चरित्र का पालन कर रहे हैं?

इस प्रश्न के कई उत्तर हो सकते हैं। हम प्रायः देखते हैं कि धार्मिक व्यक्ति भी कभी-कभी क्षणिक इच्छाओं के वशीभूत होकर घृणित कृत्य कर बैठते हैं। निःसन्देह उनका सच्चरित्र आचरण उन्हें तुरन्त सुधार देता है, किन्तु यह तथ्य तो है कि उन्होंने एक बड़ा पाप किया है और उन्हें उसका फल भोगना पड़ेगा। अतः यह दुष्कृत्य उनकी कर्म की पुस्तिका पर, जो अन्यथा निष्कलंक थी, एक काले धब्बे के समान रहकर उनके अन्यथा सुखी भविष्य में एक भीषण कर्मफल का कारण बन जाता है। इस परिस्थिति को यदि एक जन्म पूर्व स्थानांतरित कर दिया जाये तो हमें उपरोक्त प्रश्न का उत्तर मिल जाता है। अतएव एक अच्छे व्यक्ति पर

आई कठोर विपत्ति पूर्वजन्म में दुर्घटनावश किन्तु अत्यन्त गम्भीर दुष्कृत्य के कारण हो सकती है।

साथ ही साथ, किसी व्यक्ति के इस जन्म का व्यवहार केवल पूर्वजन्म की उसकी प्रवृत्तियों द्वारा ही निर्धारित नहीं होता, अपितु इस जन्म में उसके पालन-पोषण एवं संगति भी उसमें महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। अतः यदि एक बुरी प्रवृत्तियों वाला व्यक्ति कुछ अच्छे कर्मों के कारण एक अच्छे परिवार में जन्म लेता है तो उसका अनुकूल पालन-पोषण एवं परिवेश उसे अपनी दुर्वृत्तियों के भार को त्यागने का सामर्थ्य दे सकता है। और वह इस जीवन में एक नैतिक व्यक्ति बन सकता है, किन्तु उसके पूर्वजन्म के पाप उसके आचरण में परिवर्तन की अपेक्षा भी उसे कष्ट देंगे ही।

ईश्वरीय न्याय की अदालत में एक मनुष्य अज्ञानता के आधार पर निर्दोषता का दावा नहीं कर सकता।

और तो और, अधिकांश पापपूर्ण इच्छायें एवं प्रवृत्तियाँ तरुणावस्था में उभरकर आती हैं, जब सुसुप्त कामुकता जाग्रत होने लगती है। अतः एक बच्चा, जो इस जीवन में तो निर्दोष प्रतीत होता है, पूर्वजन्म में अत्यधिक बुरे कर्मों के इतिहास वाला हो सकता है। और परिणामस्वरूप पापपूर्ण इच्छायें, जो यद्यपि प्रबल होती हैं, तरुणावस्था तक बीज रूप में उसके हृदय में सुप्त रह सकती हैं। अपने पूर्व पापकर्मों के कारण निर्दोष दिखने वाला एक बच्चा भयानक उत्पीड़न का शिकार तक हो सकता है, जो उसके वर्तमान जीवन को देखते हुए अनुचित प्रतीत हो सकता है किन्तु उसके कर्मों के सम्पूर्ण खाते के परिप्रेक्ष्य में उचित होता है। (निःसन्देह यह उसके उत्पीड़कों को दोषमुक्त नहीं करता। केवल इसलिए कि बच्चे को उसके कर्मोनुसार कष्ट भोगना है, अपराधियों को कर्म के नियमों को अपने हाथ में लेने का अधिकार प्रदान नहीं करता। वे अपने कृत्यों के लिए उत्तरदायी हैं और बच्चे को शिकार बनाने के लिए वे भी भीषण कष्टों के भागी बनेंगे।)

इस प्रकार पुनर्जन्म का सिद्धान्त हमें जीवन को एक बड़े परिप्रेक्ष्य में देखने की क्षमता देता है; केवल इस छोटे से जीवनकाल के दृष्टिकोण से नहीं जो अनन्त कालचक्र में मात्र एक क्षण के समान है, अपितु अनन्त कालचक्र के दृष्टिकोण से। इस विशाल परिप्रेक्ष्य में हम समझ सकते हैं कि किस प्रकार हममें से प्रत्येक आत्मा स्वयं अपने कर्मों के लिए उत्तरदायी है। न्याय के इस सार्वत्रिक एवं अचूक सिद्धान्त को समझना ही चिरस्थाई शान्ति एवं सुख का आधार है।

लेखक डब्ल्यू, सोमरसेट मौघम इस तथ्य को सही पकड़ते हैं। वे 'द रेजर्स एज्ज' में लिखते हैं - ''क्या आपने यह ध्यान दिया है कि आत्मा द्वारा शरीर बदलने की प्रक्रिया को समझकर हम सहजता से समझ सकते हैं कि इस संसार में बुराई का अस्तित्त्व है? जो कष्ट हमें सहन करना पड़ता है यदि वह हमारे पूर्वजन्म के पापों के कारण है तो हम उन्हें बिना शिकायत के सह सकते हैं और आशा कर सकते हैं कि यदि इस जन्म में हम सच्चरित्र बनने का प्रयास करेंगे तो हमारे भविष्य के जन्म कम विपत्तिपूर्ण होंगे।''

अज्ञानता कोई बहाना नहीं

उपर्युक्त विचारों में यह भाव अन्तर्निहित है कि कुछ चीजें गलत हैं क्योंकि वे भगवान् के नियमों के विरुद्ध हैं और उन्हें करना दुष्परिणामदायक होता है। किन्तु कभी-कभी लोग पूछते हैं - ''तब क्या जब पाप करते समय मैं जानता ही नहीं था कि यह कार्य गलत है? मैं उसके लिए कष्ट क्यों भोगूँ जिसके गलत होने का मुझे ज्ञान ही नहीं था?''

ईश्वरीय न्याय की अदालत में एक मनुष्य अज्ञानता के आधार पर निर्दोषता का दावा नहीं कर सकता। प्रकृति के नियम निष्पक्ष एवं अपरिहार्य हैं। आग में जो भी हाथ डालेगा वह उसे जलायेगी, चाहे वह कोई अज्ञानी बच्चा भी क्यों न हो।

इस कहानी पर ध्यान दें - एक बार एक यात्री ने जंगल से गुजरते समय कुछ दूरी पर प्रकाश देखा। जब वह वहाँ पहुँचा तो उसके आनन्द और आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा; वहाँ उसने एक भव्य महल देखा। किसी को आसपास न पाकर वह भीतर चला गया। उसने स्वयं को एक मनोहर कक्ष में पाया जिसमें फर्नीचर, गद्दे, तकिया, पंखे और उपभोग की अन्य वस्तुएँ थीं। उसने सुन्दर व्यंजनों से सुसज्जित खाने की एक मेज भी देखी। किसी को आसपास न देखकर उसने भोजन किया और आरामदायक बिस्तर पर पंखे के नीचे विश्राम करते हुए अच्छा समय व्यतीत किया।

यह समझने के लिए कि वह यात्री सही कार्य नहीं कर रहा था, किसी को बहुत बड़ा विद्वान् होने की आवश्यकता नहीं है। उपभोग की सुविधायें उसके आनन्द उठाने के लिए नहीं थीं। यद्यपि स्वामी वहाँ दिखाई नहीं दे रहा था, इस यात्री का कर्तव्य था कि वह स्वामी को ढूँढे एवं उन नियमों के आधार पर कार्य करे जो स्वामी ने अतिथियों के लिए निर्धारित किये थे। स्वामी को किसी भी अनाधिकृत घुसपैठिये को सजा देने का पूरा अधिकार है।

इसी प्रकार जिस संसार में हम रहते हैं वह एक महल के समान है। हमारी सभी आवश्कयतायें - वायु, जल, प्रकाश, इत्यादि - भगवान् द्वारा प्रदान की जाती हैं। अतः इन उपहारों का प्रयोग करने से पूर्व प्रत्येक मनुष्य को इस संसार के निर्माता एवं स्वामी अर्थात् भगवान्, और उन नियमों के विषय में जिज्ञासा करनी चाहिए, जिनके अनुसार भगवान् इस जगत् के निवासियों से रहने की आशा करते

हैं। ऐसा नहीं है कि एक व्यक्ति अपने पूर्वानुमानों के आधार पर अपने परिवेश की हर वस्तु का दोहन करें, अपने स्वार्थ के लिए दूसरों को कष्ट पहुँचाये, और फिर अज्ञानता के आधार पर कर्म के नियमों से बचाव का दावा करे। इस प्रकार की आधारभूत सामान्य समझ के बिना कर्म करना संकट को बुलावा देना है।

इसके अतिरिक्त हमारी कर्म के नियमों के प्रति अज्ञानता एक दुर्घटना अथवा अनियमितता नहीं है, यह हमारे पूर्व के कुकर्मों के कारण है। हम एक ऐसे वातावरण में जन्म ले सकते हैं जहाँ हमें भगवान् के बारे में जानने का बहुत कम अथवा कोई भी अवसर एवं प्रोत्साहन न मिला हो और हम कर्म के नियमों से अनजान रह जायें। किन्तु हमें इस प्रकार का जन्म मिलने का कारण यह है कि पूर्वजन्म में हमारे पास भगवान् के विषय में ज्ञान प्राप्त करने का अवसर था किन्तु हमने उसका लाभ नहीं उठाया। अतएव भगवान् की उपेक्षा करने की अपनी पूर्व की इच्छाओं के कारण ही हमने ऐसी परिस्थिति में जन्म लिया है जहाँ हमें उनके बारे में सुनना न पड़े।

फिर भी हमारी पूर्व इच्छाओं पर ध्यान दिये बिना भगवान् हमें अज्ञानता का शिकार नहीं होने देना चाहते। इसलिए उन्होंने हमें धार्मिक ग्रन्थ दिये हैं, जो हमारे जीवन की निर्देश-पुस्तिका के समान हैं और धार्मिक सिद्धान्तों के विषय में चेतना फैलाने के लिए वे अपने भक्तों को इस संसार में भेजते हैं। श्रीकृष्ण भगवद्गीता में कहते हैं कि आत्मा द्वारा नया (एक के बाद दूसरा) शरीर धारण करना धार्मिक ज्ञान की दृष्टि रखने वाले बुद्धिमानों के लिए प्रकट सत्य है, किन्तु भौतिक दृष्टि से देखने पर बल देने वाले भ्रमित भौतिकवादियों के लिए रहस्य है।

भगवान् के बिना अच्छाई

''निःसन्देह मैं कर्म पर विश्वास रखता हूँ,'' कोई कह सकता है, ''पर मैं स्वयं को भगवान् जैसी साम्प्रदायिक धार्मिक अवधारणओं से परेशान नहीं करता। मैं केवल भला होने, दूसरों की भलाई करने, ईमानदारी से रहने और दूसरों को कष्ट न पहुँचाने पर विश्वास रखता हूँ। अतः मैं दण्ड पाने का अधिकारी नहीं हूँ।''

एक अन्य कथा प्रस्तुत है। एक बार चोरों के एक दल ने एक बैंक में डकैती डाली और जंगल में भाग गये। वहाँ उनका सरदार अन्य चोरों का प्रतिनिधित्व करते हुए अत्यन्त गम्भीरतापूर्वक कहने लगा – ''हम सभी को ईमानदार और सिद्धान्तवादी भला मानस होना चाहिए। इसलिए चलो, एक-दूसरे को धोखा देने का प्रयास न करें और इस धन को आपस में बराबर-बराबर बाँट लें।''

निश्चित रूप से चोरों के बीच ऐसी ईमानदारी का कोई मूल्य नहीं है। इसी प्रकार जिस संसार में हम रहते हैं उसकी एक भी वस्तु का सृजन हमने नहीं किया है, यहाँ तककि अपने शरीर का भी नहीं। श्रीईशोपनिषद् (पहला मन्त्र) दृढ़ता से कहता है, ''इस ब्रह्माण्ड की प्रत्येक चल एवं अचल वस्तु परम भगवान् के स्वामित्व एवं नियंत्रण में है।'' अतः जब हम भगवान् को दरकिनार कर, उनकी सम्पत्ति पर अपना दावा करें और भगवान् के अस्तित्त्व को स्वीकार किये बिना आपस में 'भलाई' से रहने का निर्णय करें तो हम ईमानदार चोरों से कैसे भिन्न हुए? सर्वोच्च सत्ता की दृष्टि से हम चोर ही हैं और कर्म के कठोर नियमों द्वारा दण्डित किये जायेंगे।

अतः भगवान् के बिना अच्छाई हमें कर्म की प्रतिक्रियाओं के पंजों से नहीं बचायेगी। इस सम्बन्ध में पाप की परिभाषा समझना महत्वपूर्ण है। पाप दूसरों का हानि पहुँचाने से कुछ अधिक है। यथार्थ दृष्टिकोण में श्रील प्रभुपाद व्याख्या करते हैं, *''भगवान् के स्वामित्व की उपेक्षा करते हुए जानबूझकर प्रकृति के नियमों की अवज्ञा करना ही पाप की जड़ है।''* (श्रीईषोपनिषद्, पहला मन्त्र, तात्पर्य)

कर्म से परे

अब कोई यह सही निष्कर्ष निकाल सकता है कि ''ठीक है, मैं भगवान् के नियमों को सीखूँगा, कठोरता से उनका पालन करूँगा और गारण्टी के साथ अपने लिए एक कष्टरहित भविष्य का निर्माण करूँगा।

यह कहना तो बहुत सरल है, किन्तु करना अत्यन्त दुष्कर। इन नियमों की संख्या इतनी अधिक है कि उनमें से एक को भी न तोड़ना लगभग असम्भव है। उदाहरणार्थ, श्रीकृष्ण नहीं चाहते कि हम किसी भी जीव की हत्या करें। किन्तु हम केवल चलते हुए, वाहन चलाते समय, खाते समय, अथवा स्वयं जीवित रहने की प्रक्रिया में कितने ही जीवाणुओं, कीड़ों एवं अन्य जीवों को मार डालते हैं। और यदि हम किसी प्रकार उच्च सीमा तक पापरहित जीवन यापन में सफल भी हो जायें तो भी भौतिक अस्तित्त्व के अटल कष्टों – जन्म, मृत्यु, वृद्धावस्था और रोग – को तो हमें भोगना ही पड़ेगा।

तो फिर समाधान क्या है? हमें एक सच्चे गुरु के मार्गनिर्देशन में केवल श्रीकृष्ण के लिए ही कर्म करना चाहिए। यह न केवल हमें कर्मों के फलों से मुक्त करता है अपितु धीरे-धीरे श्रीकृष्ण के प्रति हमारे स्वाभाविक प्रेम को भी पुनर्जाग्रत करता है। हम सभी श्रीकृष्ण की प्रिय सन्तानें हैं और जब हम उन्हें प्रेम करना सीख जाते हैं तो हम उनके धाम में शाश्वत ज्ञान और आनन्दमय जीवन जीने के अधिकारी हो जाते हैं। और यही जीवन का वास्तविक लक्ष्य है, न कि इस भौतिक जगत् में बार-बार जन्म लेकर आनन्द प्राप्त करने का प्रयास करना। इसलिए भगवान् श्रीकृष्ण गीता में निष्कर्षतः हमसे सामान्य अच्छे कर्मों से परे शुद्ध भक्ति तक जाने का आवाहन करते हैं, और हमें आश्वस्त करते हैं कि ऐसा करने से हम न केवल अपने सभी पापफलों से मुक्त हो जायेंगे अपितु उनके धाम में पुनः लौटकर सदा के लिए सुखी भी हो जायेंगे। ❁

चैतन्य चरण दास इस्कॉन पूना में रहते हैं। उन्होंने इलैक्ट्रानिकस् एण्ड टैलिकम्यूनिकेशनस् इंजिनियरिंग में डिग्री प्राप्त की है। अभी वे पूना एवं भारत के अन्य भागों में युवाओं को कृष्णभावना की शिक्षा देते हैं।

यूरोप में गोरक्षा

हरे कृष्ण कृषिक्षेत्रों के प्रतिनिधि यह चर्चा करने के लिए एकत्रित होते हैं कि उन्होंने श्रील प्रभुपाद की आत्मनिर्भरता के सपने को पूरा करने में कितनी प्रगति की है।

– छाया देवी दासी

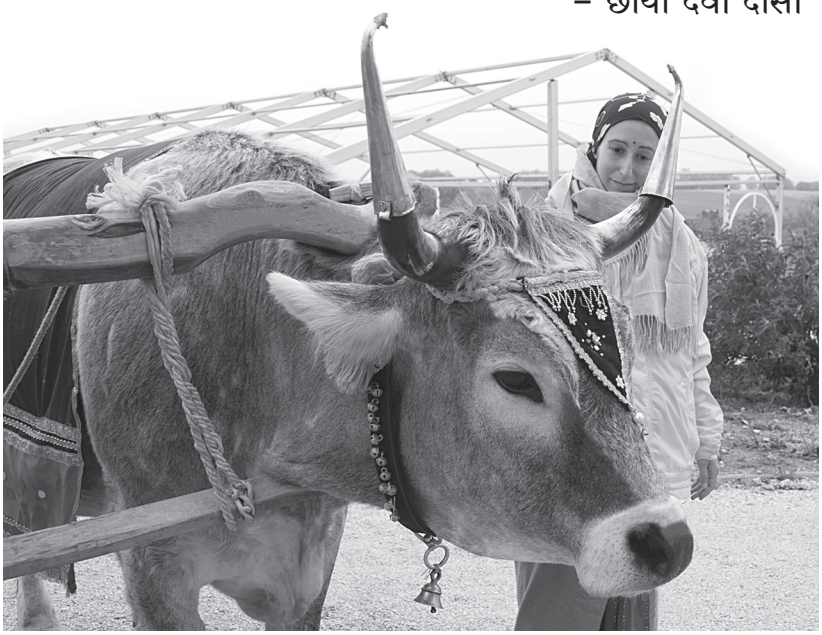

''जीव, दीजो! जीव, छेहि!''

बैल जीव बलभद्र दास के निर्देश को सुन आगे बढ़ता है, और फिर बायें मुड़ जाता है। अनेक बार ऐसे निर्देशों को दोहराने के पश्चात् बलभद्र जीव को गोशाला ले जाते हैं, जहाँ वे ब्रुश से उसे खुजलाते हैं और स्नेहपूर्वक उससे बातें करते हैं। जीव का साथी धर्म उसके निकट खड़ा है, अपनी बारी की प्रतीक्षा में यह दिखलाने के लिए कि उसे अपने पहले के पाठ से क्या-क्या याद है।

जीव और धर्म तीन वर्षीय जर्सी बैल चेक रिपब्लिक के कृष्णुव द्वुर में स्थित हरे कृष्ण कृषिक्षेत्र में रहते हैं। बलभद्र दास पूरे इस्कॉन में गोरक्षा और कृषि विभाग के प्रमुख हैं। प्रेमधत्त दास जीव और धर्म की जोड़ी को हाँकने वाले भक्त हैं, जो बलभद्र दास को जीव और धर्म

को ध्वनि निर्देशों से प्रशिक्षण देते देख रहे हैं। सुन्दर और सौम्य, जीव और धर्म फार्म पर कार्य करने वाली बैलों की अगली जोड़ी होंगे। वे कृष्णुव द्रुर में सुरक्षित रहने वाली चौदह गायों के समूह के अंश हैं।

वर्णाश्रम दास, कृष्णुव द्रुर के अध्यक्ष, और उनकी पत्नी पद्ममुखी दासी ने हमारा परिचय रासलीला और तुंगी से करवाया – ऐसी गायें जो दूध देती हैं किन्तु कभी भी बछड़ों को जन्म नहीं दिया और इस प्रकार उन्होंने प्रकृति के नियमों को झुठला दिया है। रासलीला के कूलहों में समस्या होने के कारण भक्तों ने कभी भी उससे प्रजनन नहीं करवाया। किन्तु वह दस वर्षों से दूध दे रही है। तुंगी ने अभी-अभी दूध देना आरम्भ किया है, हमारे यहाँ आने से कुछ पहले। प्रेमधत्त ने खेतों में उसके जोर से रम्भाने की आवाज सुनी और उसकी ओर दौड़ा। उसके थन दूध से भरे थे, और वह चाहती थी कि कोई उसका दूध निकालकर उसके थनों पर पड़ रहे दबाव से उसे राहत दे। आजीवन गोरक्षा गाय में इतनी शान्ति और सन्तुष्टि पैदा करती है कि वह बिना बच्चे दिये भी दूध दे सकती है।

यह देखना प्रेरणादायक है कि कैसे चैक रिपब्लिक जैसे देश में गोरक्षा हो रही है, जो गोरक्षा की भूमि भारत से इतनी दूर है। इसका श्रेय श्रील प्रभुपाद को जाता है जिन्होंने सर्वत्र भ्रमण करते हुए कृष्णभावना की स्थापना की।

इस्कॉन के यूरोप में अनेक फार्म हैं। इस्कॉन यूरोप के पहले फॉर्म सम्मेलन में, जो पिछले वर्ष मई में हुआ था, इंग्लैण्ड, बेल्जियम, जर्मनी, चेक रिपब्लिक, स्लोवाकिया, पोलैण्ड, स्वीडन और हंगरी के हरे कृष्ण किसानों ने भाग लिया। फिर भी यूरोप के सभी गोरक्षा कृषिक्षेत्रों के प्रतिनिधि नहीं आये थे। इनमें से अनेक गोपालक और किसान व्यस्त शहरों में स्थित मंदिरों से दूर स्थित कृषिक्षेत्रों में सेवा करते हैं। यद्यपि इस सेवा के लिए उन्हें अधिक ख्याति नहीं मिलती, उनका पुरस्कार है गायों एवं धरती की सेवा और ऐसे आध्यात्मिक वातावरण में निवास जहाँ वे धरती और गायों के निकट रहते हुए स्वस्थ, शान्त तथा आनन्द से भरा जीवन जी सकते हैं।

यह सम्मेलन, जिसका आयोजन इस्कॉन यूरोप के गोरक्षा और कृषि प्रमुख श्यामसुन्दर दास ने किया था, यूरोप में गोरक्षा को सहयोग देने और उसके उत्साहवर्धन के लिए उठाया गया पहला कदम था। इस प्रयास में उन्हें सफलता मिली, एवं भक्तों को प्रेरणा और भविष्य के लिए आशा।

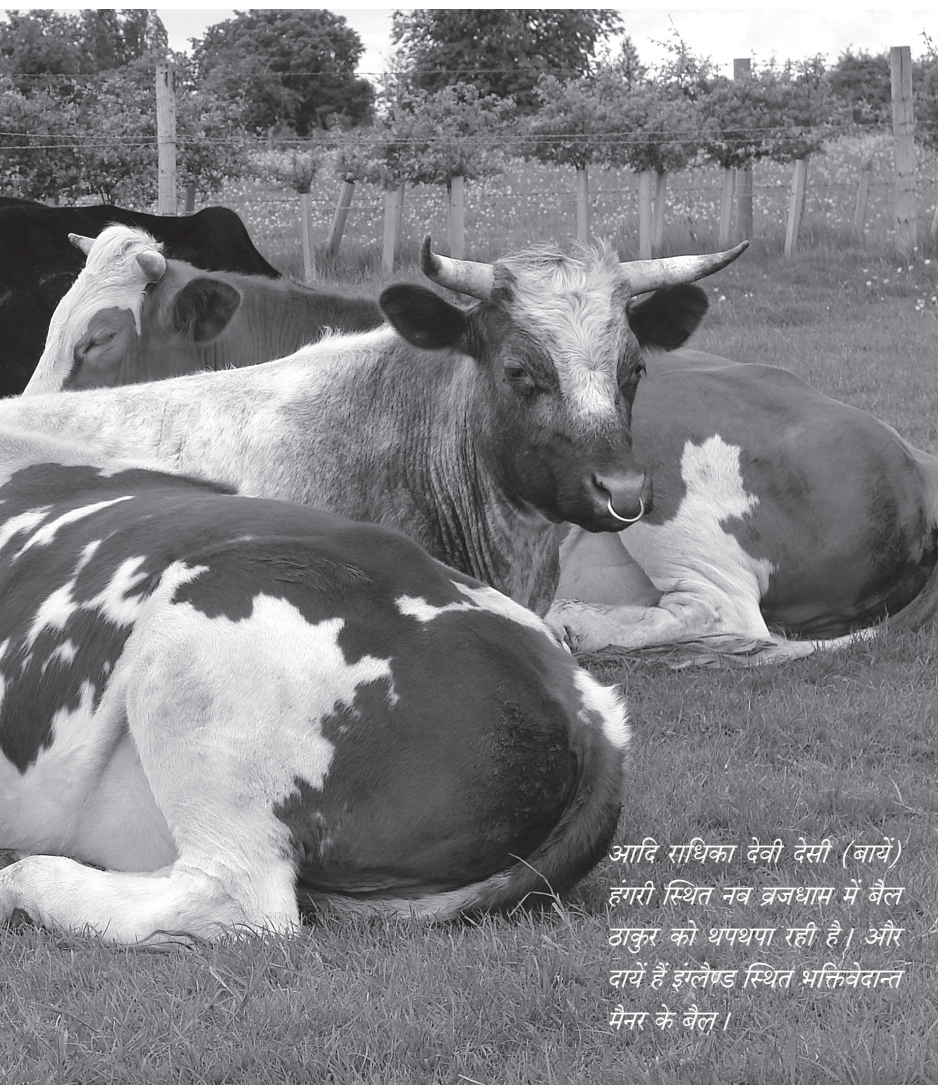

आदि राधिका देवी देसी (बायें) हंगरी स्थित नव व्रजधाम में बैल ठाकुर को थपथपा रही है। और दायें हैं इंग्लैण्ड स्थित भक्तिवेदान्त मैनर के बैल।

मैनर में गायें

श्यामसुन्दर इंग्लैण्ड स्थित भक्तिवेदान्त मैनर की गोशाला के प्रबन्धक हैं। कृष्णुव द्रुर फार्म में, जहाँ सम्मेलन हुआ था, आने से पूर्व हम भक्तिवेदान्त मैनर में कुछ समय के लिए ठहरे थे।

''भीम, उठो! बल, उठो!''

श्यामसुन्दर हमें मैनर का भ्रमण करा रहे थे कि मार्ग में बैलगाड़ी में बैठकर खुली हवा का आनन्द लेते अतिथि हमें दिखाई दिये। गाँव के वातावरण में बैलगाड़ी अतिथियों को मैनर में आकर्षित करती है।

बैल न केवल अतिथियों के लिए गाड़ी खींचते हैं, अपितु मैनर के खेतों में मशीनें चलाने में भी सहयोग करते हैं।

दिसम्बर २००७ में रॉयल सोसाइटी फॉर द प्रोटैक्शन ऑफ क्रूएलिटी टू एनिमल्स् (RSPCA) ने भक्तों की अनुमति के बिना और मना करने पर भी रोगग्रस्त गंगोत्री को यह इस विचार के अन्तर्गत मार दिया कि कष्ट भोगने से सुखद मृत्यु है। इस हृदयविदीर्ण करने वाली घटना के बाद मैनर के भक्त सरकार के पास गये और उन्हें गोरक्षा के महत्व समझने पर बल दिया। भक्त भारत में गोसेवा की संस्कृति और

समान शोकग्रस्त दिख रही थी। उसकी आँखों में आँसु थे और उसके शरीर का सौन्दर्य चला गया था...''

श्रील प्रभुपाद तात्पर्य लिखते हैं –

बैल नैतिक सिद्धान्त का प्रतीक है और गाय पृथ्वी की प्रतिनिधि है। जब बैल तथा गाय प्रसन्न मुद्रा में रहते हैं तो यह माना जाता है कि संसार भर के लोग प्रसन्न हैं। इसका कारण यह है कि बैल खेतों से अन्न उपजाने में सहायता करता है और गाय दूध देती है, जो चमत्कारी भोजन है। अतः मानव समाज इन दो महत्वपूर्ण पशुओं को बड़ी ही सावधानी से रखता है

श्रद्धा के आधार पर तर्क दे रहे हैं।

गायों के विषय में इंग्लैण्ड और भारत के दृष्टिकोणों में विशाल अन्तर है। पाश्चात्य मन वाले के लिए गायें इसलिए उपयोगी है क्योंकि वह दूध और माँस देती है। गाय एक व्यापारिक वस्तु है। भारतियों के लिए गाय हमारी माता है, बैल हमारा पिता है। गाय दूध देती है जिसे 'चमत्कारी भोजन' कहा जाता है; तब जब वह हार्मोनों और एन्टीबायोटिक्स् से मुक्त होता है। इस चमत्कारी भोजन को उत्पन्न करने के लिए गाय केवल घास खाती है। वह हमसे कितना कम लेती है और कितना अधिक देती है, जो मातृत्व का सच्चा उदाहरण है। बैल खेतों में हल चलाते हैं, भूमि में बीज बोकर स्वादिष्ट सब्जियों और अनाज उपजाने के लिए। एक पिता के समान बैल हमारी आवश्यकताओं की पूर्ति करता है।

गाय और बैल दोनों गोबर देते हैं, जिसे वैज्ञानिक तरीकों से सर्वाधिक लाभकारी सिद्ध किया जा चुका है; न केवल मिट्टी के लिए अपितु हमारे स्वास्थ्य के लिए भी। गोमूत्र अन्य वस्तुओं के साथ मिलकर अनेक मानवीय रोगों का निवारण करता है और कीटनाशक के रूप में कार्य करता है। गोबर का प्रयोग ईंधन के रूप में भी होता है, चाहे उसे सीधे जलाकर अथवा बायोगैस द्वारा मिथेन गैस में परिवर्तित कर। बैल न केवल खेतों में हल चलाते हैं, अपितु वे अन्य मशीने चलाने का कार्य भी करते हैं। गायों की रक्षा तर्कयुक्त है, क्योंकि गाय और बैल हमें अत्यावश्यक भोजन, दवाईयाँ, खाद, कीटनाशक, और बैल-शक्ति देते हैं।

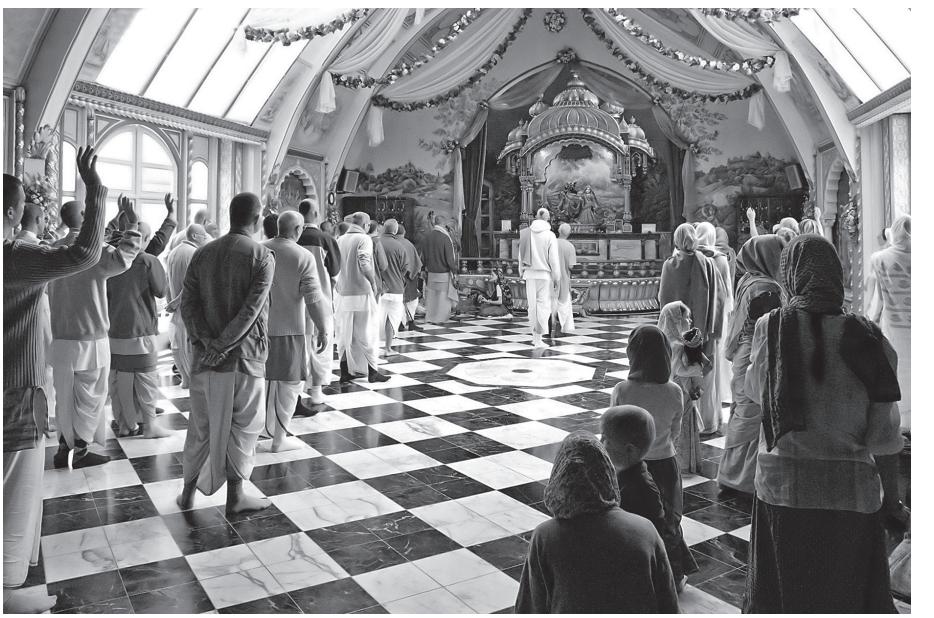

किन्तु पाश्चात्य विचारधारा अभी तक उन व्यवहारिक और आध्यात्मिक लाभों को नहीं समझ पाई है जिन्हें गाय मानव समाज को प्रदान कर सकती है।

गोरक्षा का नैतिक महत्व

श्रीमद्भागवतम् (१.१६.१८) एक घटना का वर्णन करती है – ''साक्षात् धर्म बैल के रूप में विचरण कर रहा था। उसे गाय के रूप में साक्षात् पृथ्वी मिली, जो पुत्रविहीन माता के

जिससे लोग प्रसन्नतापूर्वक सर्वत्र विचरण कर सकें। लेकिन इस समय इस कलियुग में बैल तथा गाय दोनों का वध हो रहा है और दोनों ही उन लोगों द्वारा भोजन के रूप में उपभोग में लाये जा रहे हैं जो ब्राह्मण संस्कृति को नहीं जानते। सम्पूर्ण मानव समाज के कल्याण हेतु बैल और गाय की रक्षा केवल यह प्रचार करने से हो सकती है कि ब्राह्मण संस्कृति समस्त सांस्कृतिक कार्यों की सर्वोच्च सिद्धि है। और इस प्रकार बिना किसी बाहरी प्रयास के ही शान्ति तथा सम्पन्नता प्राप्त हो जाती है। जब ब्राह्मण संस्कृति का पतन होता है तो गाय-बैल के साथ दुर्व्यवहार होता है...

कृष्णुर द्वुर मंदिर (बायें दोनों चित्र) में न्यूनतम बिजली (सौर उर्जा से बनी) का उपयोग होता है। सर्दियों में ऊष्मा के लिए वे फार्म की लकड़ियों को जलाते हैं। गौरशक्ति दास (दायें ऊपर) नव व्रजधाम के अध्यक्ष हैं। दौरे के दौरान सहभागियों को फार्म के विषय में बताते हुए। फार्म पर स्थित रेस्तरां (दायें नीचे) जहाँ सम्मेलन का आयोजन किया गया।

०

आत्मनिर्भरता का लक्ष्य

हम छह लोग इंग्लैण्ड से नव व्रजधाम समुदाय में पहुँचे। दल में मेरे अतिरिक्त बलभद्र दास, श्यामसुन्दर दास, गौर पुरुष दास (भक्तिवेदान्त मैनर फॉर्म पर्यवेक्षक), कतरीना (गंगोत्री की नर्स और गाय का दूध निकालने वाली), और वेन्डा सेहता (पूर्वी ससेक्स, इंग्लैण्ड में अहिंसा फार्म चलाने वाले) थे। नव व्रजधाम मंदिर ऊँचाई पर है, और नीचे स्थित भक्तों के घरों से होकर वहाँ जाना होता है। हम विभिन्न भक्तों के घरों में ठहरे और बिना बिजली के रहे; कुछ घरों को छोड़कर जहाँ सौर-बिजली थी।

बलभद्र दास ने सभी को संबोधन कर सम्मेलन को आरम्भ किया। उन्होंने इस्कॉन के सामाजिक ढाँचे की आवश्यकता पर बल देते हुए कहा कि हमें बाह्य संसार से परे एक ऐसा सुरक्षित स्थान चाहिए जहाँ भक्त शान्ति से रह सकें और अपने बच्चों को पाल सकें, जिससे वे भी भक्त बनें। श्रील प्रभुपाद ने कृषिक्षेत्र में इसी प्रकार के सामाजिक ढाँचे की कल्पना की थी, जहाँ गायें और धरती सभी आवश्यकताओं की पूर्ति करे। इसलिए हमारे कृषिक्षेत्रों की आवश्यकता है, क्योंकि वे आत्मनिर्भरता विकसित करने की दिशा में पहला कदम हैं।

१९७४ में श्रील प्रभुपाद ने एक पत्र में लिखा –

हमारी कृषिक्षेत्र परियोजनायें हमारे आन्दोलन की अत्यन्त महत्वपूर्ण अंश हैं। हमें आत्मनिर्भर बनना ही होगा, अपना अन्न उगाकर और अपनी गायों का दूध उत्पन्न कर। तब गरीबी का कोई प्रश्न नहीं रहेगा। तो इन फार्म समुदायों को यथासम्भव रूप से विकसित करो। उनका विकास एक आदर्श समाज के रूप में करो जो प्राकृतिक वस्तुओं पर निर्भर हों न कि उद्योगों पर। उद्योगों ने केवल नास्तिकता को जन्म दिया है, क्योंकि वे सोचते हैं कि जो उन्हें चाहिए वे वह सबकुछ बना सकते हैं। भगवद्गीता के हमारे सिद्धान्त समझाते हैं कि मनुष्य और पशुओं के

आठ भक्त नव व्रजधाम की पाँच एकड़ खेती की देखभाल करते हैं (ऊपर)। खेतों से आई सब्जियाँ एवं अन्य उत्पाद (बायें)

पास अपने शरीर का पोषण करने के लिए भोजन होना चाहिए। और भोजन वर्षा पर निर्भर है, और वर्षा हरे कृष्ण के कीर्तन पर। इसलिए सभी को हरे कृष्ण का कीर्तन करने दिया जाये, अच्छा भोजन दिया जाये और शरीर को स्वस्थ रखने का अवसर दिया जाये। यह आदर्श जीवनशैली है।

जैसे-जैसे ईंधन के बढ़ते मूल्य खाद्य उत्पादों, और अन्य आवश्यकताओं के मूल्यों को उछालेंगे, अधिकाधिक लोगों को कृषि में उस कठिन जीवन का उत्तर दिखाई देगा। साधारण-से खाद्य पदार्थों को खरीदने के लिए इतना धन व्यय करने की अपेक्षा लोग स्वयं अपना भोजन उगा सकते हैं, जो ताजा और उत्तम भी होगा। पैट्रोल फूँककर मीलों यात्रा करने की अपेक्षा वे फार्म पर कार्य कर अपनी आवश्यकताओं को पूरा कर सकते हैं। कार द्वारा सुपरमार्किट जाकर ऐसा दूध खरीदने की अपेक्षा जो कृत्रिम हार्मोनों और एन्टिबायोटिक से भरा होता है वे स्वयं पाली गायों से दूध ले सकते हैं। शहरी प्रदूषित वायु में श्वास लेने की अपेक्षा वे स्वच्छ वायु में साँसे ले स्वस्थ जीवन जी सकते हैं। फार्म पर जीवन सरल होता है, जो चिन्तन करने का समय देता है कि हमारे जीवन का उद्देश्य आध्यात्मिक है।

१९७५ में मॉरिशस में श्रील प्रभुपाद ने कहा था - ''अन्यथा जो विचार मैं दे रहा हूँ, आप उसे कहीं भी, दुनिया के किसी भी भाग में आरम्भ कर सकते हैं। इससे अन्तर नहीं पड़ता। तुम अपना भोजन स्वयं उगाओ। तुम अपने कपड़े स्वयं बुनो। प्रचुर दूध और सब्जियाँ उगाओ। तब और क्या चाहिए तुम्हे? और हरे कृष्ण का कीर्तन करो। यह वैदिक संस्कृति है - सादा जीवन उच्च विचार।''

यूरोप में इस्कॉन के सभी कृषिक्षेत्रों में नव व्रजधाम आत्मनिर्भरता में सर्वोच्च है। सम्मेलन के दौरान हमें नव व्रजधाम का दौरा करवाया गया, जिसमें फार्म के अध्यक्ष गौरशक्ति दास हमारे अगुआ थे। जून से अक्तूबर तक समुदाय के १२० भक्त फार्म में उगे ताजे खाद्य पदार्थ खाते हैं, और सर्दियों में पूरी तरह से अनाज और आलुओं की दृष्टि से आत्मनिर्भर बन जाते हैं। भक्तों ने हाल ही में शीत-गोदाम बनाये जिसमें १५० फुट-२० फुट के तीन कमरे हैं। दो हजार फलों के वृक्ष भिन्न-भिन्न फल देते हैं और आठ भक्त पाँच एकड़ में उगी सब्जियों का ध्यान रखते हैं। बैलों की पाँच प्रशिक्षित जोड़ियाँ सक्रियता से फार्म के अधिकतर कार्य करती हैं।

''हलधर, ठाकुर, गच्छ! हलधर, ठाकुर, वाम!

हल चलाने वाला बैलों को संस्कृत में निर्देश देता है। अन्तर्धी दास, नव व्रजधाम में बैलगाड़ी चलाने वाला भक्त, दिखाता है कि कैसे वह अपने ध्वनि निर्देशों से युवा बैलों की जोड़ी को नियंत्रित करता है। पहले दिन दौरा करते हुए उन्होंने प्रशिक्षण लेती एक जोड़ी दिखाई, किन्तु अगले दिन हमने पूरी तरह नियंत्रित बैलों की एक जोड़ी को खेत में कटाई करते देखा। युवा जोड़ी हल्का-फुल्का काम करती है। हमने उन्हें गर्व से कचरे से भरी गाड़ी खींचते देखा।

कृषिक्षेत्र में हमारे दौरे प्रेरणादायक रहे क्योंकि वहाँ हमें इस्कॉन के प्रत्येक फार्म के लिए सम्भावनायें दिखाई दी। अन्य फार्मों से आये भक्तों ने भी अपनी प्रस्तुतियाँ दीं। वर्णाश्रम दास ने आटा पीसने की चक्की दिखाई जो सफलतापूर्वक व्यापार करती हुई फार्म की आर्थिकता में सहयोग दे रही

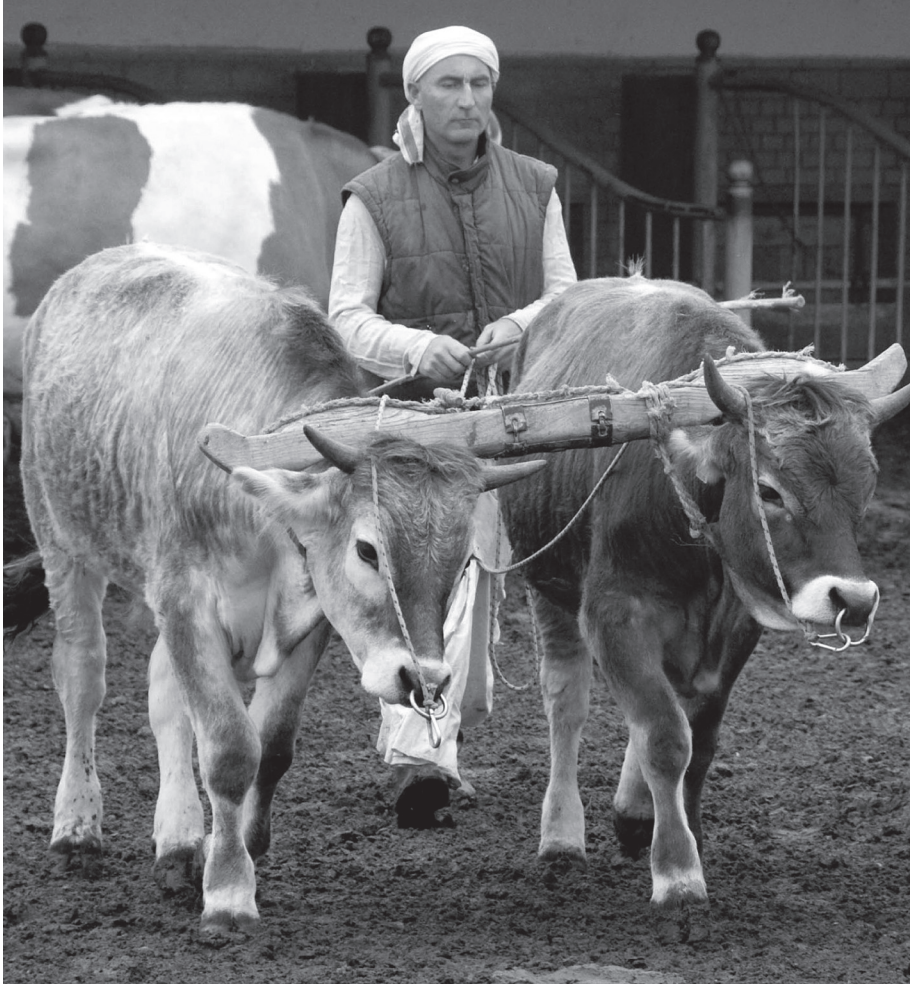

वर्णाश्रम दास यह समझाते हुए कि कैसे बैलों से चलने वाली कटाई मशीन का सर्वोत्तम उपयोग किया जाये (नीचे)। अन्तर्धी दास (बायें) दो युवा बैलों को प्रशिक्षण देते हुए।

बिस्कुट और हंगरी के नवव्रज धाम का ताजा शहद और ताजे फल हमें स्मरण कराते रहे कि स्वयं उगाये खाद्य पदार्थ कितने स्वास्थ्यप्रद और स्वादिष्ट हो सकते हैं, विशेष रूप से हवाई जहाज में मिलने वाले भोजन की तुलना में।

हमारे पास अभी भी कुछ बिस्कुट बचे हैं, और हमने ध्यानपूर्वक उन्हें रखा है। वे हमें याद दिलाते हैं उन यूरोपीय भक्तों की जिन्होंने गम्भीरतापूर्वक श्रील प्रभुपाद के कृष्णभावना के स्वप्न 'सादा जीवन उच्च विचार' को हृदय में धारण किया है – ऐसा जीवन धरती, गायों और श्रीकृष्ण के चारों ओर केन्द्रित है।

इस्कॉन गोरक्षा (ISCOWP) विषय में अधिक जानकारी के लिए www.iscowp.org पर जायें।

है। वे कुछ आटे को बेचते हैं और कुछ का बिस्कुट प्रसाद बनाकर बेचते हैं और वितरित करते हैं। हलधर दास ने, जो इंग्लैण्ड में कॉर्नवेल कृषि परियोजना से हैं, अपनी परियोजना को सहयोग देने वाले 'गोवर्धन होल फूड बिज़नेस' की प्रस्तुति दी। सलाद के डिब्बे, जिनकी लागत अत्यन्त कम है, अच्छा लाभ देते हैं। खाद्य उत्पादन के अतिरिक्त सम्मेलन के सदस्यों ने गृह निर्माण की पद्धतियों पर भी चर्चा की।

आध्यात्मिक महत्व

बलभद्र दास और शिवराम स्वामी ने, जो इस्कॉन में एक गुरु, इस्कॉन संचालन समिति के सदस्य, और नव व्रजधाम के आध्यात्मिक अगुआ हैं, कृषि परियोजनाओं के महत्व के विषय में बताया। शिवराम स्वामी ने कहा कि गोरक्षा के लिए आपके पास गोरक्षक होने चाहिए और गोरक्षकों की रक्षा होनी चाहिए जिससे वे गायों की रक्षा कर सकें। यह संरक्षण प्रदान करने और इसे बढ़ाने के लिए हमें आवश्यकता है वर्णाश्रम के सामाजिक ढाँचे की, जिसमें गोरक्षा एक अभिन्न अंग रहता है। बलभद्र दास ने बताया कि वहाँ की समस्त गतिविधियाँ जैसे बैलों से हल जोतना, बीज बोना, पौधों की देखभाल करना, फसल काटना, और फिर उसे श्री श्रीराधा-श्यामसुन्दर को अर्पित करना, जो नव व्रजधाम के अधिष्ठाता विग्रह हैं, भक्ति की पूर्णता है।

यूरोप से अमरीका में अपने फार्म पर लौटते समय हमने यात्रा के लिए थोड़ा भोजन ले लिया। चैक रिपब्लिक के कृष्णुव द्वुर कृषिक्षेत्र के अनाज से बने

श्रद्धाञ्जलियाँ

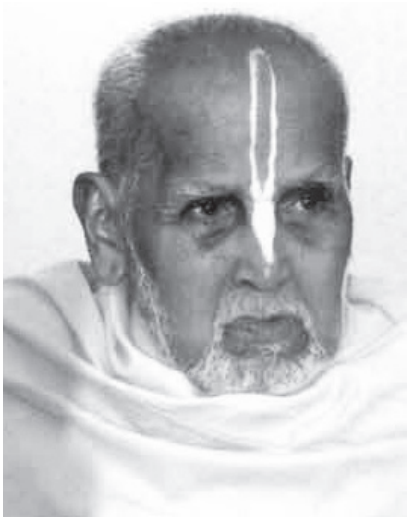

श्रील भक्तिवैभव पुरी महाराज

सम्पूर्ण वैष्णव समाज श्रील भक्तिवैभव पुरी महाराज के तिरोभाव पर शोकग्रस्त है। ३ मार्च २००९ को उन्होंने शरीर त्याग दिया। वे ९६ वर्ष के थे।

उनका जन्म उड़ीसा में हुआ था। श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती से १९३६ दीक्षा लेने से पूर्व महात्मा गाँधी के स्वतन्त्रता आन्दोलन में सर्किय थे। १९६६ में उन्होंने संन्यास स्वीकार किया और श्रीकृष्ण चैतन्य मिशन की स्थापना की, जिसकी भारत एवं विदेशों में शाखायें हैं।

पुरी महाराज का इस्कॉन के संस्थापकाचार्य श्रील प्रभुपाद के साथ गहरे सम्बन्ध थे, और वे प्रत्येक वर्ष वृन्दावन में श्रील प्रभुपाद के तिरोभाव दिवस कार्यक्रम पर श्रद्धांजली देने आते। पुरी महाराज श्रीचैतन्य महाप्रभु के मिशन में एक अथक प्रचारक थे और हमें उनकी अनुपस्थिति खलेगी।

श्रीमान पी. एल. सेठी

प्रिय भक्तों,

कृपया मेरा प्रणाम स्वीकार कीजिए। श्रील प्रभुपाद की जय हो। श्रीमान पी. एल. सेठी के निधन का समाचार देते हुए हम अत्यधिक दुःख का अनुभव कर रहे हैं। उन्होंने अपना शरीर १६ फरवरी, सोमवार, रात्रि ११:०२ को मुम्बई में छोड़ा। वे ८८ वर्ष के थे।

वे इमारत बनाने वाले एक ठेकेदार थे और मुम्बई के उन पहले भक्तों में से थे जो जुहु में इस्कॉन मन्दिर बनाने हेतु श्रील प्रभुपाद की सहायता करने हेतु आगे आए। वे १९७१ में श्रील प्रभुपाद से मिलेऔर समझ गए कि वे एक अत्यधिक विशेष व्यक्ति से मिले हैं। वे इस्कॉन के आजीवन सदस्य और श्रील प्रभुपाद के निष्ठावान सेवक बन गए। जब विरोधी पक्ष और महानगरपालिका श्रील प्रभुपाद द्वारा बनाए जा रहे मन्दिर को नष्ट करने का प्रयास कर रही थी, सेठीजी एक मुख्य सैनिक के समान मन्दिर के निर्माण एवं भक्तों की सुरक्षा हेतु खड़े हो गए। बाद में जब जमीन प्राप्त करने का युद्ध समाप्त हो गया, श्रील प्रभुपाद ने सेठीजी को भक्तों के लिए कुछ कमरे बनाने का निवेदन किया। श्रील प्रभुपाद ने कहा, ''जैसे-जैसे आप भक्तों के लिए कमरे बना रहे हो, श्रीकृष्ण आपके लिए गोलोक धाम में कमरे बना रहे हैं।'' जब भी सेठीजी श्रील प्रभुपाद के विषय में बोले उनकी आँखें नम हो जाती। उन्होंने अपना सर्वस्व श्रील प्रभुपाद की सेवा में रत रखा। अपने अन्तिम दिनों में सेठीजी केवल इन्हीं शब्दों का उच्चारण करते थे - ''राधा कृष्ण!'' ''श्रील प्रभुपाद!''। बाकी सबकुछ बोलना बन्द हो गया था। अपने परिवार के प्रति उनके अन्तिम शब्द वही थे जो श्रील प्रभुपाद ने उनसे कहे थे, ''कुछ ही दिनों में गोलोक धाम में आपका कमरा तैयार रहेगा।'' अन्ततः जब यह निश्चित् हो गया कि सेठीजी अपने अन्तिम पड़ाव पर आ पहुँचे हैं, श्री श्रीराधा रासबिहारी के भक्तों ने उनके घर में एकत्रित हो २४ घण्टे नाम-संकीर्तन प्रारम्भ कर दिया। इन सभी भक्तों द्वारा मधुर संकीर्तन का श्रवण करते हुए अपने सभी कर्तव्यों को पूर्ण कर सेठीजी ने इस जगत् को छोड़ दिया।

सेठीजी (पीछे खड़े हुए) श्रील प्रभुपाद के साथ

आपका नम्र सेवक,

ब्रजहरी दास।

झुकने के लिए बाध्य

यह वार्तालाप कृष्णकृपामूर्ति ए. सी. भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद और एक अतिथि के बीच सितम्बर १९६८ में सियेटल हरे कृष्ण केन्द्र पर हुआ।

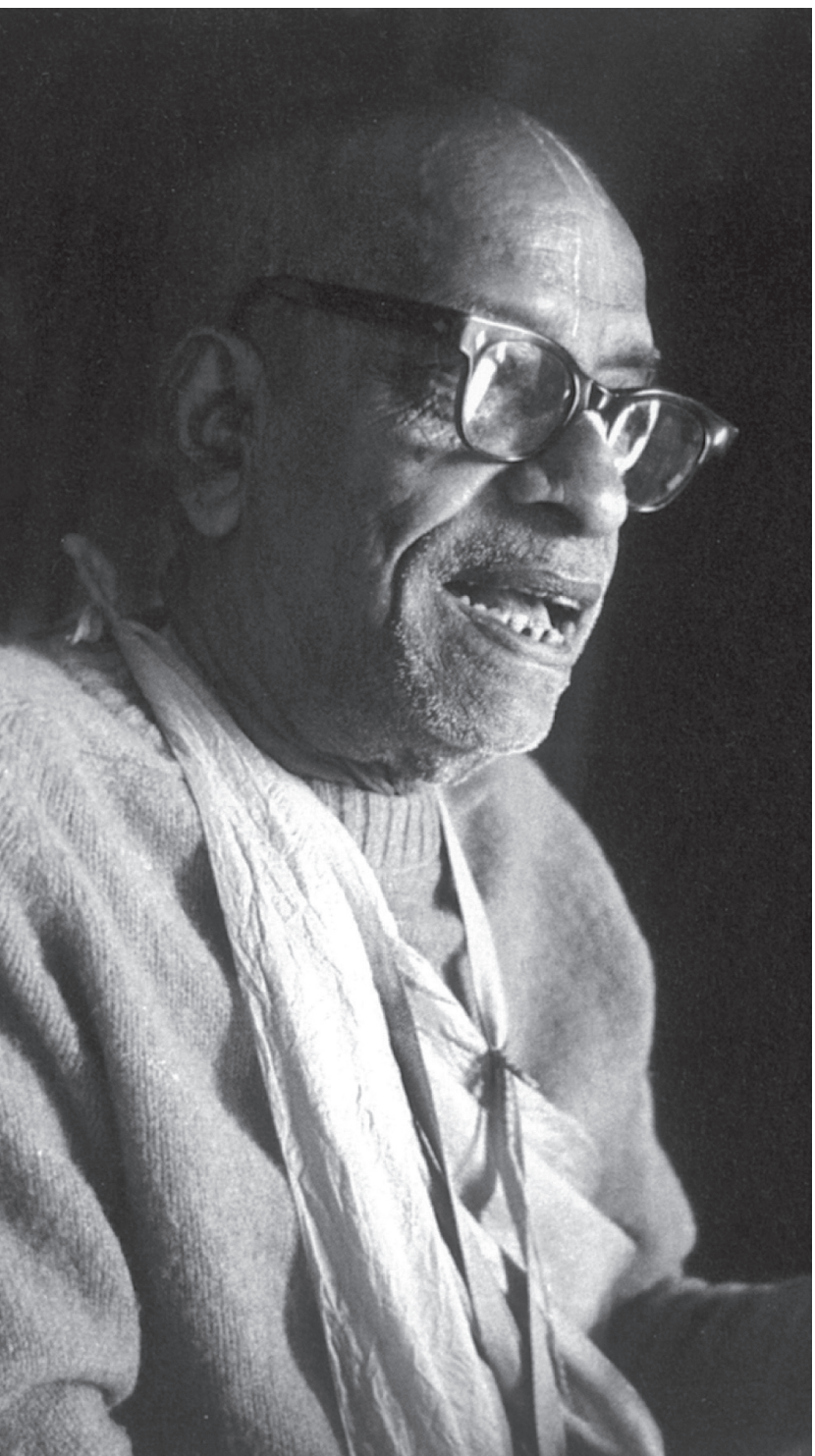

अतिथि – क्या आप अधीनता के विषय में कुछ बता सकते हैं?

श्रील प्रभुपाद – अधीनता? हाँ, यह सरल है। प्रत्येक व्यक्ति को किसी न किसी के प्रति अधीन होना ही होता है। क्या आप किसी के अधीन नहीं हैं?

अतिथि – हाँ, भौतिक दृष्टि से। किन्तु आध्यात्मिक दृष्टि में, मैं स्वयं को किसी के प्रति अधीन नहीं समझता।

श्रील प्रभुपाद – जब आप यह समझ जायेंगे कि आध्यात्मिक जीवन क्या है, आप पायेंगे कि आध्यात्मिक दृष्टि से भी आप अधीन हैं, क्योंकि आपका स्वभाव ही अधीन होना है। आप आध्यात्मिक एवं भौतिक से क्या समझते हैं?

अतिथि – हाँ, उदाहरणतः मेरी नौकरी पर मैं अपने मालिक से अधीन हूँ किन्तु अपने आध्यात्मिक अस्तित्व में मैं स्वयं को उसके या किसी और के अधीन अनुभव नहीं करता। दूसरे शब्दों में मैं अनुभव नहीं करता कि मुझे किसी के सामने झुकना है और मैं यह भी नहीं सोचता कि किसी दूसरे व्यक्ति को मेरे सामने झुकना होगा।

श्रील प्रभुपाद – आप झुकना क्यों नहीं चाहते?

अतिथि – क्योंकि मैं नहीं समझता कि मुझे किसी को कुछ देना बाकी है या दूसरे व्यक्ति को मुझे कुछ देना है।

श्रील प्रभुपाद – हाँ, यह भौतिक बीमारी है। हम झुकने के लिए बाध्य कर दिए जाते हैं फिर भी हम सोचते हैं हमें झुकना नहीं पड़ेगा। यह बीमारी है।

अतिथि –कोई भी मुझे झुकने के लिए बाध्य नहीं कर सकता।

श्रील प्रभुपाद – जरा समझने की कोशिश कीजिए। आप कह रहे हैं कि आप झुकना नहीं चाहते – क्या यह सही है?

अतिथि –यह वास्तव में सत्य है, हाँ।

श्रील प्रभुपाद – क्यों?

अतिथि – मैं नहीं समझता कि मैं किसी से नीचा हूँ।

श्रील प्रभुपाद – यही भौतिक जगत् की बीमारी है। आपने स्वयं ही अपनी बीमारी का विश्लेषण किया है। प्रत्येक व्यक्ति यही सोच रहा है, ''मैं स्वामी बनना चाहता हूँ। मैं झुकना नहीं चाहता।''

प्रत्येक व्यक्ति यही सोच रहा है। यह केवल आपकी ही बीमारी नहीं है, प्रत्येक व्यक्ति की यही बीमार मानसिकता है – ''मैं क्यों झुकुँ? मैं क्यों किसी के अधीन बनुँ?'' किन्तु प्रकृति हमें झुकने के लिए बाध्य कर रही है। अब लोगों की मृत्यु क्यों हो रही है? क्या आप इस प्रश्न का उत्तर दे सकते हैं?

अतिथि –लोगों की मृत्यु क्यों हो रही है?

श्रील प्रभुपाद – हाँ, कोई भी मरना नहीं चाहता फिर भी वे मर रहे हैं। क्यों?

अतिथि – हाँ शारीरिक दृष्टि से मृत्यु तो आनी ही है।

श्रील प्रभुपाद – इसका अर्थ है आप शारीरिक रूप से बाध्य हैं। आप इसके अधीन हैं। आप ऐसा क्यों कहते हैं कि आप स्वतन्त्र हैं?

अतिथि – हाँ मैं सोचता हूँ कि मैं....

श्रील प्रभुपाद – आप गलत सोच रहे हैं। वही मैं कहना चाहता हूँ। आप अधीन हैं और आपको अवश्य ही शारीरिक नियमों के समक्ष झुकना ही होगा। जब मृत्यु आती है, आप नहीं कह सकते, ''ओह, मैं तुम्हारी आज्ञा पालन करने वाला नहीं हूँ।'' इसलिए आप अधीन हैं।

अतिथि –हाँ, मैं भगवान् के अधीन हूँ।

श्रील प्रभुपाद – नहीं, अभी के लिए भगवान् का भूल जाओ। भगवान् बहुत दूर की बात है। अभी हम भौतिक प्रकृति के विषय में चर्चा कर रहे हैं। केवल इतना समझने का प्रयास करो कि यद्यपि आप मरना नहीं चाहते, आप मरने के लिए बाध्य कर दिए जाते हो क्योंकि आप अधीन हो।

अतिथि – हाँ, यह तो बहुत महत्व की बात है।

श्रील प्रभुपाद – इसलिए आप अपनी स्थिति को समझो – आप अधीन हो। आप घोषणा नहीं कर सकते, ''मैं मुक्त हूँ, मैं अधीन नहीं हूँ।'' यदि आप सोच रहे हैं कि आप अधीन नहीं होना चाहते, आपको झुकने की आवश्यकता नहीं है, इसका अर्थ है कि आप बीमार अवस्था में हैं।

अतिथि – ठीक है। किन्तु मुझे किसके समक्ष नतमस्तक होना है?

श्रील प्रभुपाद – सर्वप्रथम अपनी बीमारी को पूर्णतया समझने का प्रयास करो। तत्पश्चात् हम दवा प्रस्तावित करेंगे। आप मृत्यु के समक्ष झुक रहे हो, आप बीमारी के समक्ष झुक रहे हो, आप वृद्धावस्था के समक्ष झुक रहे हो – आप अनेक वस्तुओं के समक्ष झुक रहे हो।'' किन्तु आपको झुकना तो पड़ेगा ही। आप अपनी स्थिति को क्यों भूल जाते हो? वह विस्मृति ही आपकी बीमारी है। अगला कदम यह समझना है कि क्योंकि आपको झुकने के लिए बाध्य कर दिया जाता है, अब आपको यह ढूंढना है कि कहाँ झुकने से आप सुखी हो जायेंगे। और वे श्रीकृष्ण हैं। आपका झुकना बन्द नहीं होगा क्योंकि आप उसी के लिए बने हो किन्तु यदि आप श्रीकृष्ण और उनके प्रतिनिधि के समक्ष झुकेंगे, आप सुखी हो जायेंगे। वह अन्तर है। यदि श्रीकृष्ण और उनके प्रतिनिधि के समक्ष नहीं झुकते हैं, आप माया (श्रीकृष्ण की भौतिक प्रकृति) के समक्ष झुकने के लिए बाध्य कर दिए जाओगे। वह आपकी स्थिति है। आप किसी भी क्षण मुक्त नहीं हो सकते।

किन्तु यदि आप श्रीकृष्ण एवं उनके प्रतिनिधि के समक्ष झुकते हो, आप सुखी हो जाओगे। उदाहरणतः बच्चा सदैव अपने माता-पिता के अधीनस्थ रहता है, वह सुखी रहता है। उसकी माँ कहती है, ''मेरे प्रिय बच्चे, यहाँ आओ और बैठ जाओ।'' हाँ, बच्चा कहता है और सुखी रहता है। यही बच्चे का अपनी माँ के प्रति सम्बन्ध है। उसीप्रकार श्रीकृष्ण और उनके प्रतिनिधि हमारे प्रिय माता-पिता के समान हैं और माया के शिंकजे में फँसे निःसहाय बच्चों के समान हैं। किन्तु यदि हम उनके अधीनस्थ रहेंगे हम सुरक्षित एवं सुखी रहेंगे।

इसलिए आप झुकना बन्द नहीं कर सकते – वह सम्भव नहीं है। किन्तु आपको केवल उस सही व्यक्ति को ढूंढना है जिसके प्रति आपको झुकना है। बस इतना ही। यदि आप कृत्रिम रूप से सोचते हैं, ''मैं किसी के समक्ष भी झुकने वाला नहीं हूँ, मैं स्वतन्त्र हूँ,'' तब आप दुःखी हो जायेंगे। आपको केवल सही व्यक्ति के अधीनस्थ होना है और वे हैं श्रीकृष्ण या उनके प्रतिनिधि।

श्रीभगवान् ने कहा

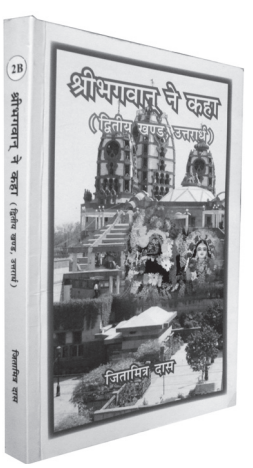

'भगवद्दर्शन' की सुप्रसिद्ध लेखमाला 'श्रीभगवान् ने कहा' का तीसरा खण्ड (द्वितीय अध्याय, उत्तरार्ध, श्लोक ३९-७२) पाठकों के लिए उपलब्ध है।

सम्पर्क –
इस्कॉन, हरे कृष्ण हिल
संत नगर, मेन रोड, ईस्ट ऑफ कैलाश
नई दिल्ली – ११००६५
दूरभाष – (०११)२६२३५१३३-३७ (एक्स्टेंशन ११०)

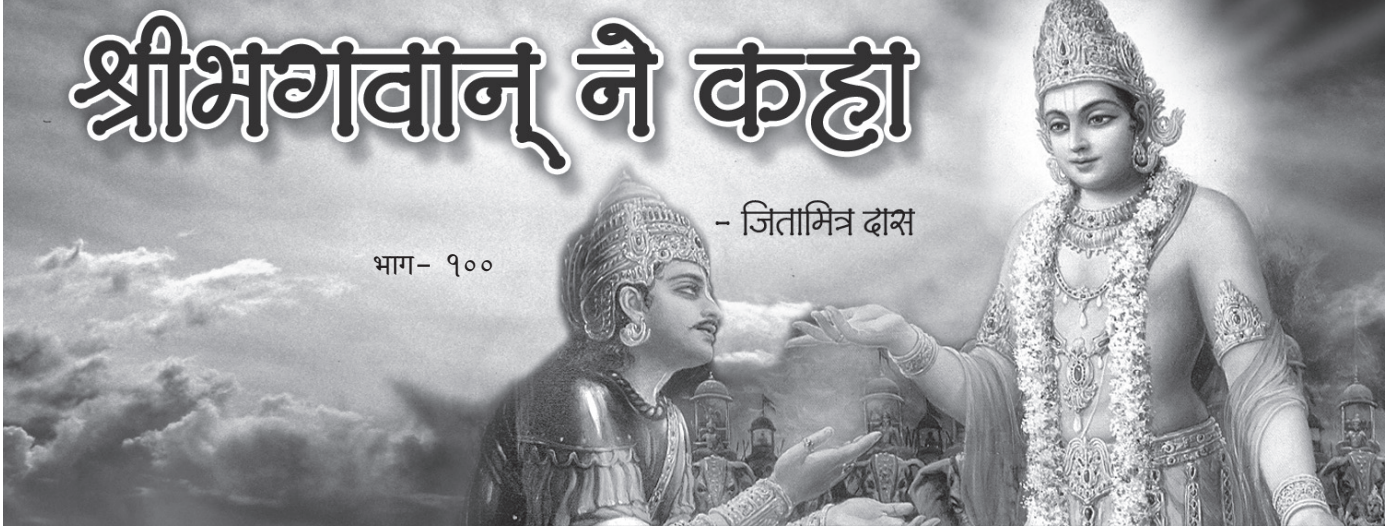

श्रीभगवान् ने कहा

- जितामित्र दास

भाग- १००

श्रीकृष्ण अर्जुन को समझाते हैं कि वैराग्य कृत्रिम रूप से नहीं अपितु उच्चरस की प्राप्ति पर प्राप्त होता है।

विषया विनिवर्तन्ते निराहारस्य देहिनः।
रसवर्जं रसोऽप्यस्य परं दृष्ट्वा निवर्तते ।।

अर्थात् 'देहधारी जीव इन्द्रियभोग से भले ही निवृत्त हो जाये पर उसमें विषय भोगों की इच्छा बनी रहती है। लेकिन उत्तम रस के अनुभव होने से ऐसे कार्यों को बन्द करने पर वह भक्ति में स्थिर हो जाता है।' (भगवद्गीता, अध्याय २ श्लोक ५९)

इस श्लोक में भगवान् स्थिर बुद्धि वाले व्यक्ति के लक्षणों का वर्णन कर रहे हैं। श्लोक संख्या ५४ में अर्जुन ने जो चार प्रश्न पूछे थे, उनमें से तीसरा प्रश्न था - स्थिर बुद्धि वाला व्यक्ति किस प्रकार बैठता है? इसके उत्तर में भगवान् ने कछुए का उदाहरण दिया। परन्तु अब यहाँ पर प्रश्न उठता है कि जिस प्रकार कछुआ संकट काल में तनाव तथा भय की स्थिति में ही अपने अंगों को समेटता है तो क्या उसी प्रकार स्थिर बुद्धि वाला व्यक्ति भी भयभीत होकर ही विषय भोगों से अपनी इन्द्रियों को समेटता है? तो यहाँ पर श्रीभगवान् कह रहे हैं कि ऐसा नहीं है। स्थिर बुद्धि वाले व्यक्ति के मन में भोगों की इच्छा ही मिट जाती है क्योंकि उसे श्रीकृष्ण के दर्शन का सर्वोच्च आनन्द प्राप्त हो चुका है। इस श्लोक में श्रीभगवान् की तीन अत्यन्त महत्वपूर्ण शिक्षायें हैं जिनकी हम क्रम से चर्चा करेंगे -

१. अस्थाई समाधान

इस श्लोक के प्रारम्भिक शब्द हैं - *विषया विनिवर्तन्ते निराहारस्य देहिनः।* अर्थात् जो व्यक्ति विषयों का निषेध करता है उसके विषय तो निवृत्त हो जाते हैं। तो यहाँ पर भगवान् कह रहे हैं कि यदि कोई व्यक्ति कृष्णभावनामृत के अभ्यास के बिना अपने प्रयास से विषयों का त्याग करता है तो कुछ समय के लिये तो अवश्य ही उसके विषय दूर हो जाते हैं। परन्तु यह बात अधिक समय तक के लिये नहीं रहती है। यहाँ पर निराहार शब्द के दो अर्थ हैं - १. ऐसा व्यक्ति जो भोजन नहीं करता है। परन्तु ऐसा सम्भव नहीं है। अतः यहाँ पर निराहार का अर्थ कम या दिन में केवल एक बार भोजन करना है। २. ऐसा व्यक्ति जो स्वेच्छापूर्वक विषयों का त्याग करता है। जितनी भी इन्द्रियाँ हैं, उनके अपने-अपने विषय ही उनके आहार हैं। जैसे नेत्रों का विषय रूप है तो इसे नेत्रों का आहार कहा जा सकता है। इस प्रकार निराहार का अर्थ हुआ ऐसा व्यक्ति जो नेत्रों के द्वारा सुन्दर रूप का दर्शन नहीं करता, कानों के द्वारा मधुर संगीत या वाणी नहीं सुनता, त्वचा के द्वारा कोमल या शीतल स्पर्श नहीं करता, नासिका के द्वारा सुगन्ध ग्रहण नहीं करता तथा जिह्वा के द्वारा स्वादिष्ट भोजन नहीं ग्रहण करता है। तो निराहार शब्द की जो दूसरी व्याख्या है उसमें पहली व्याख्या का भी समावेश है कि वह कम भोजन करने वाला हो। यह बात भी सच है कि यदि कम भोजन किया जाये तो इन्द्रियाँ शिथिल पड़ जाती हैं तथा इस प्रकार विषयों को भोगने की शक्ति भी नहीं रहती है। वृद्धावस्था आने पर व्यक्ति के भोजन की मात्रा और भोगों को भोगने की शक्ति भी कम हो जाती है। तथा यह एक सामान्य सिद्धान्त है कि अधिक भोजन खाने से विषयों को भोगने की इच्छा भी अधिक होती है। श्रील रूप गोस्वामी उपदेशामृत में बताते हैं कि जब उदर वेग को सन्तुष्ट किया जाता है तो उपस्थ वेग अर्थात् जननेन्द्रिय का वेग व्यक्ति को अशान्त करता है। इसलिये ब्रह्मचर्य का पालन करने के लिये अत्याहार विशेष रूप से बाधक होता है।

२. बलपूर्वक दमन की व्यर्थता

श्लोक की अगली पंक्ति के शब्द हैं - रस वर्जम्। इसके पूर्व भगवान् ने कहा था कि यदि व्यक्ति विषयों का त्याग करता है तो उसके विषय तो दूर हो जाते हैं, परन्तु अब यहाँ पर भगवान् कह रहे हैं कि यद्यपि उस व्यक्ति के विषय तो दूर हो गये हैं परन्तु उस व्यक्ति की उन विषयों के प्रति रस की अनुभूति समाप्त नहीं हुयी है। जैसे ही वह विषयों का चिन्तन करता है कि तुरन्त उन विषयों में उसकी आसक्ति हो जाती है। इस श्लोक के तात्पर्य में श्रील प्रभुपाद लिखते हैं - 'जब तक कोई अध्यात्म को प्राप्त न हो तब तक

इन्द्रिय भोग से विरत होना असम्भव है। विधि-विधानों द्वारा इन्द्रियभोग को संयमित करने की विधि वैसी ही है जैसे किसी रोगी के भोज्य पदार्थ के खाने पर प्रतिबन्ध लगाना। किन्तु इससे रोगी की न तो भोजन के प्रति रुचि समाप्त होती है और न वह ऐसा प्रतिबन्ध लगाया जाना चाहता है। इसी प्रकार अल्पज्ञानी व्यक्तियों के लिये इन्द्रिय संयमन के लिये अष्टांग-योग जैसी विधि की संस्तुति की जाती है जिसमें यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान आदि सम्मिलित हैं।.....'

इस श्लोक पर प्रवचन देते हुये दिनांक २७-४-६६ को न्यूयार्क में श्रील प्रभुपाद ने कहा - 'निषेध ! ठीक है ! मैं ऐसा नहीं करूँगा। परन्तु इससे प्रतिक्रिया होगी। कहने का अर्थ है कि बलपूर्वक निग्रह चल नहीं पायेगा। मान लीजिये कोई व्यक्ति बीमार है।... चिकित्सक के आदेशानुसार वह किसी प्रकार का ठोस भोजन नहीं ग्रहण कर रहा है। परन्तु यदि उसका भाई कुछ चपाती खा रहा है। तो वह सोचता है। अहा! मैं चाहता हूँ कि काश ! मैं भी चपाती खा पाता ! तो उसके अन्दर खाने की प्रवृत्ति है, परन्तु भय के कारण वह नहीं खाता... तो यहाँ पर कहा गया है - रस वर्जम्। जिसने भौतिक भोगों को बलपूर्वक त्याग दिया है, उसका यह निषेध अधिक काल तक नहीं टिकता है। ऐसे अनेक उदाहरण हैं। एक बहुत बड़े मुनि थे, जिनका नाम था, विश्वामित्र।... वे योग मार्ग में बहुत आगे बढ़ना चाहते थे। वन में वे बहुत तीव्र ध्यान कर रहे थे। स्वर्ग के राजा इन्द्र ने सोचा - यह व्यक्ति इतनी कठोर तपस्या कर रहा है। यह व्यक्ति भगवान् से मेरा पद माँग सकता है। तो उनकी तपस्या भंग करने के लिये उसने मेनका नामकी अप्सरा को भेजा। चाहे स्त्री हो या पुरुष, इस जगत् में असली बन्धन है - सहवास। तो मेनका को विश्वामित्र के पास भेजा गया और विश्वामित्र ध्यान कर रहे थे। उनके नेत्र बन्द थे। तो उस स्त्री ने अपने नूपुरों से ध्वनि उत्पन्न की और विश्वामित्र ने सोचा - अहा ! मेरे समक्ष अत्यन्त सुन्दर और जवान स्त्री है। अब इस स्त्री को इसीलिये भेजा गया था। तो वे उस स्त्री के साथ फँस गये।.... तो यहाँ पर एक उदाहरण है कि वे एक बहुत बड़े ध्यान योगी थे, परन्तु उनके अन्दर सहवास की इच्छा नहीं समाप्त हुयी। तो फिर बलपूर्वक वह प्रकट हो गयी। अपनी इन्द्रियों का बलपूर्वक दमन करना उपयुक्त नहीं है।.....'

असफल नशा-निषेध अभियान : जिस समय श्रील प्रभुपाद अमेरिका में गये हुये थे, उस समय अमेरिका की सरकार लोगों का नशा छुड़ाने के लिये करोड़ों डॉलर खर्च कर रही थी। परन्तु लोगों का नशा बन्द नहीं हो सका। बनावटी तरीके से कुछ समय के लिये नशा बन्द हो सकता है, परन्तु गीता का सिद्धान्त है कि उस निषेध के द्वारा व्यक्ति के अन्दर भोगने की इच्छा समाप्त नहीं होती है। परन्तु जब श्रील प्रभुपाद ने हरे कृष्ण आन्दोलन फैलाया तो अमेरिका की सरकार को अत्यन्त आश्चर्य हुआ कि लोगों का नशा बन्द हो गया।

सौभरि मुनि का उदाहरण : विश्वामित्र मुनि के पतन को देखकर सौभरि मुनि ने विचार किया - ' मैं जल के अन्दर रहकर तपस्या करूँगा। जल के अन्दर कोई भी स्त्री मेरी तपस्या भंग करने के लिये नहीं आ सकेगी।' इस बार यद्यपि कोई स्त्री जल के अन्दर नहीं आयी, परन्तु सौभरि मुनि ने देखा कि उनके समक्ष मछलियों में भी स्त्री-पुरुष का सम्बन्ध हो रहा है। इस प्रकार सौभरि मुनि का ध्यान तपस्या से विचलित हो गया तथा उन्होंने राजा मान्धाता की पचास कन्याओं से विवाह कर लिया।

३. स्थाई समाधान

श्लोक के अन्तिम शब्द हैं - *रसोऽप्यस्य परं दृष्ट्वा निवर्तते।* अर्थात् परमेश्वर का दर्शन होने पर उसका भौतिक विषयों के प्रति रस समाप्त हो जाता है। इस श्लोक के तात्पर्य में श्रील प्रभुपाद लिखते हैं - '..... किन्तु जिसने कृष्णभावनामृत के पथ पर प्रगति के क्रम में परमेश्वर कृष्ण के सौन्दर्य का रसास्वादन कर लिया है, उसे जड़ भौतिक वस्तुओं में कोई रुचि नहीं रह जाती।.....'

इस श्लोक के उक्त प्रवचन में श्रील प्रभुपाद ने कहा - 'परन्तु जो व्यक्ति आध्यात्मिक रूप से उन्नत है, उसके ऊपर बलप्रयोग नहीं होता है। वह स्वेच्छा से त्याग देता है। यही अन्तर है। स्वेच्छा से त्याग देता है। कैसे? स्वेच्छा से क्यों त्यागता है? परं दृष्ट्वा निवर्तते। उसे कुछ दिव्य आस्वादन प्राप्त हुआ है। इतना दिव्य कि वह भौतिक भोगों की चिन्ता नहीं करता है। ... यामुनाचार्य ने एक बहुत अच्छा श्लोक दिया है -

यदवधि मम चेतः कृष्णपादारविन्दे
नवनवरसधामन्युद्यतं रन्तुमासीत्।
तदवधि बत नारी संगमे स्मर्यमाने
भवति मुखविकारः सुष्ठु निष्ठीवनं च।।

वे अपने जीवन का अनुभव बतला रहे हैं। वे एक राजा थे। उन्होंने खूब विषयों को भोगा। अब जब वे महान भक्त बन गये तथा आध्यात्मिक कार्यों में लग गये तो वे अपना अनुभव इस प्रकार बतला रहे हैं। 'जबसे मैंने अपना हृदय श्रीकृष्ण की परा भक्ति में लगाया हैं, तबसे क्या परिणाम हुआ? मुझे प्रतिक्षण नया-नया दिव्य सुख प्राप्त हो रहा है।' नारी संग का अर्थ है - स्त्री पुरुष का सहवास। चूँकि वे अनुभव कर चुके हैं। वे पारिवारिक व्यक्ति थे। वे एक राजा थे। वे कहते हैं कि 'तबसे जब भी मैं सहवास के विषय में सोचता हूँ मैं इस विचार पर थूकता हूँ।' तो परं दृष्ट्वा निवर्तते। यह जीवन उन्हें क्यों प्राप्त हुआ? क्योंकि उन्होंने कुछ दिव्य सुख का अनुभव कर लिया है। और दिव्य सुख की तुलना में यह भौतिक सुख थूकने के समान है। आप समझे? अत्यन्त तुच्छ। '

श्रद्धा से अनर्थनिवृत्ति तक : श्रील रूप गोस्वामी अपनी पुस्तक भक्तिरसामृत सिन्धु में बतलाते हैं, कि भक्ति का प्रारम्भ श्रद्धा से होता है, फिर साधुसंग। उसके पश्चात् भजनक्रिया तथा उसके परिणामस्वरूप अनर्थनिवृत्ति होती है।

श्रद्धा : सर्वप्रथम व्यक्ति के मन में शास्त्रों के प्रति श्रद्धा उत्पन्न होती है। व्यक्ति सोचता है कि गीता तथा भागवत जैसे ग्रन्थ सामान्य व्यक्ति के द्वारा लिखे हुये नहीं हैं। इन ग्रन्थों में जो दिव्य सन्देश है, वह मेरे कल्याण के लिये है। इसे कहते

हैं – श्रद्धा। **साधुसंग :** श्रद्धा के पश्चात् व्यक्ति ऐसे व्यक्तियों के प्रति प्रभावित होता है जो गीता–भागवत जैसे ग्रन्थों के सन्देश का वर्णन करते हैं। उन साधुओं का संग करके वह अधिक से अधिक श्रीकृष्ण के विषय में तथा भक्ति के विषय में जानकारी प्राप्त करने का प्रयास करता है।

भजनक्रिया : इसके पश्चात् जब व्यक्ति साधुओं के मार्गदर्शन में गम्भीरतापूर्वक नियमों का पालन करता है तो इसे भजनक्रिया कहते हैं।

अनर्थनिवृत्ति : तीव्र भजन के प्रभाव से वह अनर्थों से मुक्त होता है। अनर्थ का अर्थ है – ऐसी वस्तुयें जिनका कोई अर्थ नहीं है। इस प्रकार अनर्थ ऐसे विचारों को कहते हैं जिनमें हम विषय भोगों में ही अपने जीवन की सफलता मानते हैं। अमेरिका के हिप्पियों में श्रील प्रभुपाद ने श्रद्धा की छोटी–सी चिनगारी देखी तथा उसको धीरे–धीरे विकसित करके उनके हृदय में साधुसंग का अंगारा बना दिया। फिर साधुसंग के अंगारे को प्रज्ज्वलित करके उन्होंने भजनक्रिया की अग्नि बना दी। उस भजनक्रिया की अग्नि के द्वारा उन हिप्पियों के हृदय में जितने अनर्थ थे वे भस्म हो गये। इस प्रकार वे हिप्पी से हैप्पी (प्रसन्न) बन गये। इस अनर्थनिवृत्ति को ही भगवान् यहाँ पर रस की निवृत्ति कह रहे हैं, क्योंकि भौतिक विषयभोगों में रस की अनुभूति होना ही वास्तव में अनर्थ है।

ध्रुव महाराज के हृदय का शुद्धिकरण : अपनी सौतेली माँ द्वारा अपमानित होने पर लिए ध्रुव महाराज ने भगवान् को प्रसन्न करके अपने पिता से भी बड़ा पद प्राप्त करने के लिये कठोर तपस्या की। ६ मास की तीव्र भजनक्रिया के पश्चात् भगवान् ने उन्हें दर्शन दिये। अब चूँकि उनका हृदय शुद्ध हो चुका था, अतः उन्होंने भगवान् से अब उस भौतिक वरदान को न माँग कर शुद्ध भक्ति का ही वरदान माँगा।

दिति के हृदय का शुद्धिकरण : अपने दो पुत्रों हिरण्यकशिपु तथा हिरण्याक्ष के वध के पश्चात् दिति इन्द्र के प्रति ईर्ष्या से भरी थी। इन्द्र को मारने हेतु उसने पुंसवन व्रत किया। किन्तु उस दौरान भगवान् की पूजा एवं नियमों का पालन करने से दिति की इन्द्र के प्रति ईर्ष्या की भावना दूर हो गयी।

परं दृष्ट्वा की व्याख्या : यहाँ पर भगवान् कह रहे हैं – *रसोऽप्यस्य परं दृष्ट्वा निवर्तते।* अर्थात् परमेश्वर का दर्शन करने पर उसका भौतिक विषयों के प्रति रस समाप्त हो जाता है। तो यहाँ पर परं दृष्ट्वा का सामान्य अर्थ है – परमेश्वर का दर्शन करके। श्रीकृष्ण का एक नाम 'पर' भी है। पर का अर्थ है – वह पुरुष जो भौतिक प्रकृति से परे है। प्रह्लाद महाराज श्रीमद्भागवत (७.९.४३) में नृसिंह देव के प्रति कहते हैं – *नैवोद्विजे पर दुरत्यय वैतरण्यास्त्वद्वीर्यगायनमहामृतमग्नचित्तः।* अर्थात् 'हे परमेश्वर। मैं नरक की वैतरणी नदी, जिसे पार करना अत्यन्त कठिन है, से तनिक भी भयभीत नहीं हूँ क्योंकि मेरा चित्त आपके यशोगान रूपी महा–अमृत में निमग्न रहता है।' तो यहाँ भी श्रीकृष्ण को पर नाम से सम्बोधित किया गया है।

बनावटी तरीके से कुछ समय के लिये नशा बन्द हो सकता है, परन्तु गीता का सिद्धान्त है कि उस निषेध के द्वारा व्यक्ति के अन्दर भोगने की इच्छा समाप्त नहीं होती है।

अब हम दृष्ट्वा शब्द पर विचार करेंगे। दृष्ट्वा का सामान्य अर्थ है – देखकर। परन्तु यदि गहरायी से विचार किया जाये तो दृष्ट्वा शब्द के अनेक अर्थ होते हैं। लंका से लौट कर हनुमानजी ने श्रीराम से कहा कि उन्होंने सीताजी को तत्त्व से देखा है। अब यहाँ पर सीताजी को देखने का अर्थ क्या है? सीताजी को देखने का अर्थ केवल देखना ही नहीं है, बल्कि सीताजी को पहिचानना, उनके गुण जानना, उनसे बातचीत करना, सब कुछ है। इस सम्बन्ध में एक अन्य उदाहरण भी दिया जा सकता है। जब वधू पक्ष के लोग वर को देखने के लिये उसके घर में आते हैं तो वर को देखने का अर्थ केवल देखना ही नहीं है, बल्कि उसके विषय में सब कुछ जानना है, जैसे पुरुष की आयु, उसका रूप–रंग, उसका काम, उसका स्वभाव, आचरण, व्यवहार आदि। उसी प्रकार यहाँ पर परं दृष्ट्वा का अर्थ है कि जीव ने श्रीकृष्ण के गुणों को भली–भाँति सुनकर यह निश्चित कर लिया है उसे एकमात्र श्रीकृष्ण को ही अपना स्वामी बनाना है, एकमात्र श्रीकृष्ण की ही शरण लेनी है तथा एकमात्र श्रीकृष्ण की इच्छा तथा आदेश के अनुसार कार्य करना है। यहाँ पर परं दृष्ट्वा का अर्थ श्रीकृष्ण को देखना, उनकी वाणी सुनना, उनका स्पर्श करना, उनके शरीर की सुगन्ध सूघँना तथा उनको अर्पित भोग का रसास्वादन करना, यह सब कुछ समझना चाहिये। इस प्रकार जब जीव अपनी पाँचों इन्द्रियों से श्रीकृष्ण की अनुभूति प्राप्त कर लेता है तो फिर उसका भौतिक रूपों को देखने, भौतिक संगीत को सुनने, भौतिक शरीर का स्पर्श करने, भौतिक वस्तुओं की सुगन्ध सूँघने तथा भौतिक पदार्थो को चखने के प्रति रस बिल्कुल समाप्त हो जाता है।

दृष्ट्वा का एक अन्य अर्थ है – सम्बन्ध स्थापित करके। इस प्रकार परं दृष्ट्वा का अर्थ हुआ – श्रीकृष्ण के साथ सम्बन्ध स्थापित करके। तो यहाँ पर भगवान् कह रहे हैं कि जब जीवात्मा उनके साथ पाँच प्रकार के मुख्य रसों में से किसी एक रस में सम्बन्ध स्थापित कर लेता है तो उसका भौतिक भोगों के प्रति रस समाप्त हो जाता है। पाँच प्रकार के मुख्य रस हैं – १. शान्त रस, २. दास्य रस ३. सख्य रस ४. वात्सल्य रस और ५. माधुर्य रस। इस प्रकार जीवात्मा जब तक इन पाँच प्रकार के दिव्य रसों में से किसी एक रस में स्थित नहीं हो जाता है तब तक उसका भौतिक भोगों के प्रति रस समाप्त नहीं होता है।

हरे कृष्ण !

फरवरी तक संशोधित

अन्तर्राष्ट्रीय कृष्णभावनामृत संघ के केंद्रों की सूची *

संस्थापकाचार्यः श्री श्रीमद् ए.सी.भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद

अहमदाबाद, गुजरात हरे कृष्ण धाम, सेटेलाइट रोड, गांधीनगर हायवे क्रॉसिंग, ३८० ०५८ /दूरध्वनि: (०७९) २६८६-१९४५, १६४५, २३५०

अमृतसर, पंजाब, हरे कृष्ण मंदिर, प्रभुपाद मार्ग, चौक मोनी बाजार, लच्छमनसार, अमृतसर/दूरध्वनि: (०१८३) २५४०१७७

इंदौर, म.प्र., निपानिया, आगरा-मुम्बई बाईपास रोड, इन्दौर, दूरध्वनि: (०७३१) ४९७२६६५

इलाहाबाद, उ.प्र., ए/१६१, काशी राजनगर, बल्वघाट २११००३,/ दूरध्वनि:(०५३२) २४१६७१८

उज्जैन, मध्यप्रदेश, समुदाय केन्द्र, महानन्दनगर ४५६०१०/ दूरध्वनि:(०७३४) २५२१०२०

उधमपुर, जम्मु व काश्मीर, श्रील प्रभुपाद आश्रम, श्रील प्रभुपाद मार्ग, श्रील प्रभुपाद नगर/ दूरध्वनि: (०१९९२)२७०२९८, २७६१४६

कोलकाता, प. बंगाल ३-सी, अल्बर्ट रोड, ७०००१७/ दूरध्वनि: (०३३)२२८७-३७५७, -६०७५, -८२४२

कटरा, जम्मु व काश्मीर, श्रील प्रभुपाद आश्रम, श्रीकालिका माता मंदिर, कटरा वैष्णो देवी/ दूरध्वनि: (०१९९१) २३३०४७

कुरुक्षेत्र, हरियाणा ३६९, गुदड़ी मोहल्ला, मेन बाजार, १३२११८/ दूरध्वनि: (०१७४४) २३४८०६

कोयंबटूर, तमिलनाडू, श्री जगन्नाथ मंदिर, १०० फीट नई स्कीम रोड, हरे कृष्ण धाम, कोयंबटूर ६४१०११/ दूरध्वनि: (०४२२) २६२-६५०९, -६५०८

गुवहाटी, आसाम श्री श्री रुक्मिणी कृष्ण मंदिर माउंट हरे कृष्ण, उलूबारी चराली, दक्षिण सरनिया, ७८१ ००७ /दूरध्वनि: (०३६१) २५४५९६३

चंडीगढ़, पंजाब हरे कृष्ण धाम, दक्षिण मार्ग, सेक्टर ३६-बी, १६० ०३६ /दूरध्वनि: (०१७२) २६०१५९०, २६०३२३२

लुधियाना, पंजाब, स्टर्लिंग टावर, वृन्दावन रोड, सिविल लाइन्स, १४१००१/ दूरध्वनिः (१६१)३११८८९७, ९८१५९४०००५, २७७०६००

जयपुर, इस्कॉन, गिरधारी-दाऊजी मंदिर, धोलइ, विजय पथ के सामने, मानसरोवर, ३०२०२० /दूरध्वनि:(०४१४)२७८२७६५,२७८१८६०

जम्मु, जम्मु व काश्मीर, शकंर चैरिटेबिल ट्रस्ट, शक्ति नगर, ए जी कार्यालय के निकट, १८२ १०१/ दूरध्वनि: (०१९९१) २५८२३०६

तिरुपति, आ.प्र., के. टी.रोड, विनायक नगर, ५१७ ५०७ / दूरध्वनि: (०८७७) २२३०११४, २२३०००९

त्रिवेंद्रम, केरल, टी.सी. २२४/१४८५. डब्ल्यू.सी. हॉस्पिटल रोड, थाइकाउड, ६९५ ०१४ /दूरध्वनि: (०४७१) ३२८१९७

द्वारका, गुजरात भारतीय भवन, देवी भवन रोड़, द्वारका, ३६१३३५/ दूरध्वनि: (०२८९२) ३४६०६

नई दिल्ली, हरे कृष्ण हिल, संत नगर, मेन रोड, इस्ट ऑफ कैलाश, ११००६५ /दूरध्वनि: (०११) २६२३५१३३,४,५,६,७

नई दिल्ली ४१/७७, पंजाबी बाग (पश्चिमी), ११००२६ /दूरध्वनि: २५२२२८५१, २५२२७४७५, ५५१३६२००

नोयडा, उ.प्र., श्री श्रीगोविन्द मंदिर, भक्तिवेदान्त विद्यापीठ, ए/५, सैक्टर ३३, एन.टी.पी.सी. कार्यालय के सामने/दूरध्वनि: (०१२०) २५०६२११/२५०६३६३

नागपुर : श्री श्री राधा गोपीनाथ मंदिर, भरतवाडा रोड़, गुलमोहर नगर के पास, रामानुज नगर, कालमन मार्केट, नागपुर ४४०००८, दूरध्वनि - ९३७१०६४१०२, ९४२३६३५३११

पटना, बिहार, आर्य कुमार रोड, राजेंद्र नगर ८०००१६/ दूरध्वनिः(०६१२) ६८७६३७, ६८५०८१

पुरी, उड़ीसा, भक्ति कुटी, स्वर्ग द्वार, पुरी ७५२००१/ दूरध्वनि: (०६७५२) २३१४४०

पूना : ४, तारापुर रोड, कैम्प, ४११ ००१ /दूरध्वनि: (०२०) २६३३२३२८, २६३६१८५५

बड़ोदा, गुजरात, हरे कृष्ण धाम, हरिनगर पानी की टंकी के निकट, गोत्री रोड, ३९००२१ /दूरध्वनि: (०२६५) २३१०६३०, २३३१०१२

बेलगाम, कर्नाटक, राधा गोकुलानंद मंदिर, २११, श्रील प्रभुपाद मार्ग, शुक्रवार पेठ, टिलकवाडी, ५९०००६ /दूरध्वनि: (०८३१) २४३६२६७, २४००१०८

बेंगलोर, कर्नाटक, हरे कृष्ण हिल, १ 'आर' ब्लॉक, राजाजी नगर, सेकंड स्टेज, कॉर्ड रोड, ५६००१० /दूरध्वनि:(०८०) ३४७१९५६

बेंगलोर, कर्नाटक, श्रीजगन्नाथ मंदिर, नम्बर ५ श्रीपुरम, पहला क्रॉस, शेषाद्रिपुरम, बेंगलोर ५६००२०/ दूरध्वनि:(०८०) २३५६५७०८

भुवनेश्वर,उड़ीसा, नेशनल हायवे न. ५, आय. आर. सी. विलेज, ७५१०१५ दूरध्वनि: (०६७४) २५५३५१७, २५३३४७५, २५५४२८३

हरिद्वार, श्रील प्रभुपाद आश्रम, गौरांग हाऊस, नई बस्ती, भीमगोडा २४९४०१/ दूरध्वनि: (०१३३४) २६०८१८, ९४११३७१८७०

हैद्राबाद, आ.प्र.,हरे कृष्ण धाम, नामपल्ली, स्टेशन रोड, ५००००१ / दूरध्वनि: २४७४४९६९, २४६०७०८९

* उपर्युक्त केन्द्र सूची आंशिक है। सम्पूर्ण सूची के लिए btghindi@pamho.net पर लिखें।

रायपुर, छत्तीसगढ़, हरे कृष्ण लैण्ड, आलोपी नगर, महर्षि विद्यालय के सामने, तटिबन्ध, रायपुर ४२९००१/ दूरध्वनिः (०७७१)५०३७५५५

चेन्नई, तमिलनाडु, हरे कृष्ण धाम, भक्तिवेदान्त स्वामी रोड, इ.सी.आर. रोड, इन्जामबक्कम, ६०००४१ /दूरध्वनि: (०४४) २५०१९३०३, २५०१९१४७

मायापुर, प.बंगाल, श्री मायापुर चंद्रोदय मंदिर, श्रीमायापुर धाम, जिला नदिया, ७४१३१३ /दूरध्वनि: (०३४७२) २४५२३९, २४५२४०, २४५२३३

मुंबई, मीरा रोड, सृष्टि कॉम्प्लैक्स, श्री श्री राधा गिरिधारी मंदिर, मीरा रोड (पूर्व), रोयल कालेज के सामने, जिला ठाणे /दूरध्वनि: (०२२) २८११७७९५, २८११७७९६

मुंबई, हरे कृष्ण धाम, जुहू ४०० ०४९ / दूरध्वनि: (०२२) २६२० ६८६०

मुंबई, श्री श्री राधा गोपीनाथ मंदिर, ७, के.एम. मुन्शी मार्ग, भारतीय विद्या भवन के सामने, चौपाटी, मुंबई ४०० ००७ /दूरध्वनि: (०२२) २३६९ ७२२८

लखनऊ, उ.प्र., १ अशोक नगर, गुरु गोविंद सिंह मार्ग, २२६०१८/ दूरध्वनि: (०५२२) २२३५५६, २७१५५१

कानपुर, उ.प्र., मैनावती मार्ग, बिठूर रोड, नवाबगंज, कानपुर २०८००२, दूरध्वनि:०९३०७१८८११७, kanpur@pamho.net

वृंदावन, उ.प्र., कृष्ण बलराम मंदिर, भक्तिवेदान्त स्वामी मार्ग, रमण-रेती, जिला मथुरा, २८११२४ /दूरध्वनि: (०५६५) २५४००२१

वल्लभ विद्यानगर, गुजरात, पॉलिटेक्निक कॉलेज के सामने, ३८८१२१ /दूरध्वनि: (०२६९२)२३०७९६, २३३०१२

विजयवाडा, आ.प्र., वेन्कटपलेम करकट्टा रोड, उन्दवल्ली गाँव, तडेपल्ली मण्डाल, विजयवाडा, जिला गुंटूर ५२२५०१/ दूरध्वनिः (०८६४५)२७२५१३

सिकंदराबाद, आ.प्र., २७, सेंट जॉन्स रोड, ५०००२६ / दूरध्वनिः(०४०) ७८०५२३२

सोलापुर, महाराष्ट्र, अमृत अपार्टमेन्ट, पुराना अक्कलकोट नगर। ४१३००५/ दूरध्वनि: ०९३७११७८३९३

पंढरपुर, महाराष्ट्र, हरे कृष्ण धाम, चन्द्रभागा नदी के पूर्वी तटपर, पंढरपुर, जिला सोलापुर। पिन ४१३३०४, दूरभाषः ०९४२३३३५९९१

सूरत, गुजरात, रेन्डर रोड, जहाँगीरपुर, ३९५००५/दूरध्वनि: (०२६१) ७६५८९१, ७६५५१६, ७७३३८६

श्रीरंगम्, तमिलनाडू, ९३ अन्नमण्डपम् रोड, ए-१ चैतन्य अपार्टमेन्ट, ६२०००६/ दूरध्वनि: (०४३१) ४३३९४५

वाराणसी, इस्कॉन, बी २७/८० दुर्गाकुण्ड रोड, दुर्गाकुण्ड पुलिस स्टेशन के पास, २२१०१०/ दूरध्वनि: (०५४२) २७६४२२, २२२६१७

विशाखापट्टनम्, इस्कॉन, ७-५-१०८ पाण्डुरंगपुरम् बीच रोड, ५३०००३/दूरध्वनि: (०८९१) २५२८३७६

झाँसी, उ.प्र., हरे कृष्ण मंदिर, अन्दर सैंयर गेट (काली बाडी के पास) झाँसी, २८४००२/दूरध्वनि: (०५१७) २४४३६०२

नासिक, महाराष्ट्र, जनरल वैद्य नगर, वृंदावन कॉलोनी, पूर्णिमा बस स्टॉप के पीछे, द्वारका, नासिक। पिन ४२२०११, दूरभाष-(०२५३) ६४५०००५, ९८५००७१२२७

गाजियाबाद, श्री श्रीराधा-मदनमोहन मंदिर, आर-११/३४, राजनगर। दूरध्वनिः (०१२०)२९६४२००

नोयडा, उ.प्र., ए-५, सैक्टर ३३, पिनः २०१३०१, दूरध्वनिः (०१२०) २५०६२११, २५०६२६२

वैष्णव दिनदर्शिका

१ अप्रैल से १० मई तक

अप्रैल २००९

शुक्रवार ३, रामनवमी/भगवान श्रीरामचंद्र आविर्भाव - दोपहर तक उपवास।

रविवार ५, कामदा एकादशी।

सोमवार ६, पारायण का समय - ६:५८-१०:१८।

गुरुवार ९, श्री बलराम रासयात्रा, श्रीकृष्ण वसंत रास, श्री वंशीवदन ठाकुर आविर्भाव, श्री श्यामानंद प्रभु आविर्भाव।

मङ्गलवार १४, शालग्राम एवं तुलसी जलदान प्रारम्भ।

गुरुवार १६, श्रीअभिराम ठाकुर तिरोभाव।

सोमवार २०, श्रील वृंदावनदास ठाकुर तिरोभाव।

मङ्गलवार २१, वरुथिनी एकादशी।

बुधवार २२, पारायण का समय ५:४८-१०:०९।

शनिवार २५, श्रील गदाधर पण्डित आविर्भाव।

सोमवार २७, अक्षय तृतीया, २१ दिनों तक चलने वाली चंदन यात्रा आरम्भ।

मई २००९

शुक्रवार १, जाह्नु सप्तमी।

रविवार ३, श्रीमती सीतादेवी आविर्भाव, श्रील मधु पण्डित तिरोभाव, श्रीमती जाह्नवा देवी आविर्भाव।

मङ्गलवार ५, मोहिनी एकादशी।

बुधवार ६, रुक्मिणी द्वादशी (श्रीमती रुक्मिणी देवी आविर्भाव), पारायण का समय ५:३६ ह्न ९:०३।

गुरुवार ७, श्री जयानन्द प्रभु तिरोभाव।

शुक्रवार ८, भगवान् नृसिंह देव आविर्भाव (संध्या तक उपवास)।

शनिवार ९, श्रीकृष्ण झूलन और जलक्रीड़ा आरम्भ, श्रील परमेश्वरीदास ठाकुर तिरोभाव, श्री राधारमण देवजी प्राकट्य, श्रीपाद माधवेन्द्रपुरी आविर्भाव, श्रील श्रीनिवास आचार्य आविर्भाव।

क्षणभंगुरता

२७ फरवरी, २००९। रात के नौ बज चुके थे। मुझे मंदिर हॉल से हल्के कीर्तन की ध्वनि सुनाई दी; अकसर इस समय तक सब शान्त हो जाता था। पता चला कि हमारे मंदिर से जुड़ी कैंसरग्रस्त एक माताजी अपने जीवन के अंतिम क्षणों में थी, और भक्त कीर्तन करते हुए भगवान् से उनके लिए प्रार्थना कर रहे थे। यद्यपि मैं सोने की तैयारी कर चुका था, कुछ सोचते हुए मैं कीर्तन में जा बैठा।

शायद यह मेरे जीवन का सर्वाधिक हृदयस्पर्शी कीर्तनों में से एक रहा होगा। एक करताल, मृदंग और हारमोनियम के साथ पाँच-छह भक्त कीर्तन कर रहे थे।

मैं कल्पना करने लगा कि कैसे वे अभी निःसहाय बिस्तर पर लेटी होंगी, यद्यपि न तो मैंने कभी उन्हें देखा था, और न ही कभी उनके विषय में सुना था।

मैं विचार करने लगा कि क्या वे चेतन हैं? या असहनीय पीड़ा के कारण अचेतन? क्या वे अंतिम समय भगवान् का स्मरण कर पायेंगी या नहीं? शायद उनके चारों ओर भक्त कीर्तन करते हुए उन्हें प्रोत्साहित कर रहे होंगे, उनकी अगली यात्रा के लिए। कोई उनके मुख में तुलसी पत्र रख रहा होगा, तो कोई गंगा, यमुना या राधाकुण्ड का जल उन्हें दे रहा होगा। निश्चित ही उनके सम्मुख राधा-कृष्ण और गौर-निताई के चित्र लगे होंगे, जिससे चेतना के किसी भी क्षण वे उनका दर्शनकर उनका स्मरण कर सकें।

मैं विचार करने लगा इस संसार के स्वभाव पर। क्षणभंगुरता। यहाँ हमें जीवन को कितना महत्व देना सिखाया जाता है। जीवन को संजोना और सँवारना, ये दो कार्य सबसे महत्वपूर्ण होते हैं। किन्तु तभी सूचना मिलती है - ''आपको लाइलाज रोग है!'' और सबकुछ उल्टा-पुल्टा हो जाता है।

ऐसा नोटिस आने तक हम छोटी-छोटी बातों को महत्व देते हैं - ''इसने ऐसा कहा मुझे... उसने मुझपर आरोप लगाया... उसने मुझे धोखा दिया...।'' किन्तु एक बार मृत्युशय्या पर आने के बाद ये सब बातें निरर्थक रह जाती हैं। जिन वस्तुओं के लिए हमने लड़ाइयाँ की, जिन लोगों को हमने अपना मित्र अथवा शत्रु माना, जिन परिस्थितियों को हमने अनुकूल या प्रतिकूल माना, सब मूल्यहीन बन जाता है। क्षणभंगुर वस्तुओं को आवश्यकता से अधिक महत्व देते हुए हम उन वस्तुओं को पूरी तरह नजरअन्दाज कर देते हैं जो न केवल स्थाई हैं, अपितु जो मृत्यु के पश्चात् के जीवन में हमारे साथ रहती है।

मैं विचार करने लगा भगवान् की कृपा पर। अनादि काल से इस भौतिक संसार में फँसें हमारे पास स्वयं यहाँ से मुक्त होने का कोई मार्ग नहीं था। किन्तु भगवान् ने कृपावश वह विधि दी जिससे हम पुनः अपने सच्चे घर लौट सकते हैं, सदा-सदा के लिए सुखी जीवन जीने के लिए।

यदि भक्त अचेत है और श्रीकृष्ण का स्मरण नहीं किये बिना शरीर छोड़ देता है तो उसका क्या? मैं विचार करने लगा।

भगवान् कोई निष्ठुर न्यायाधीश, कंजूस व्यापारी अथवा बेवकूफ निरीक्षक नहीं हैं। न तो वे उस बेवकूख निरीक्षक के समान हमारी दिखावटी भक्ति से वे मूर्ख बनेंगे और न ही हमारे द्वारा बाह्य रूप से अपनी विस्मृति पर वे एक निष्ठुर न्यायाधीश के समान ठहाका लगायेंगे - ''हाँ, देखो तुम मेरा स्मरण नहीं कर पाये! सड़ते रहो इसी संसार में।'' और न ही वे कंजूस व्यापारी के समान नाप-तोल कर अपनी कृपा देते हैं। वे उदार हैं। वे हमारी चित्तवृत्ति के एक-एक कण से अवगत हैं।

श्रील प्रभुपाद 'रसराज श्रीकृष्ण' में लिखते हैं - *''भगवान् हमसे दूर नहीं हैं। वे हमारे साथ हैं। वे ऐसे मित्र हैं जो हमारे साथ रहते हैं, हमारे अनेक जन्म लेने की अपेक्षा भी। वे प्रतीक्षा कर रहे हैं कि कब हम उनकी ओर मुड़ेंगे। वे इतने दयालु हैं कि यद्यपि हम उन्हें भूल जायें, वे हमें कभी नहीं भूलते।''*

मैं विचार करने लगा बहुत पहले सुनी एक अमरीकी कथा पर।

एक शराबी प्रतिदिन गिरजाघर जाता था। किन्तु अन्दर न जाकर वह बाहर से ही हाथ हिलाकर कहता, ''हे जीसस! मैं, रॉबर्ट आया हूँ,'' और चला जाता। अनेक वर्ष ऐसे ही बीत गये। एक दिन अत्यन्त रोगग्रस्त हो वह बिस्तर से आ लगा। उसमें उठने तक की हिम्मत नहीं थी। अचानक उसने दरवाजे पर दस्तक के साथ एक आवाज सुनी - ''हे रॉबर्ट! मैं, जीसस आया हूँ।''

मैंने विचार किया भक्तों की कृपा पर। जहाँ एक ओर समाज में स्वार्थता को 'सामान्य व्यवहार' के रूप में स्वीकार कर लिया गया है, केवल भक्त ही हमारे सच्चे मित्र हैं। उस रात्रि सभी भगवान् से केवल एक प्रार्थना कर रहे थे - ''हे भगवान्! मृत्यु से जूझती जीवात्मा को अपना स्मरण करने की शक्ति दो, जिससे इस जीवन के पश्चात् वह अपने सच्चे घर लौट सके।''

सच्चा मित्र वह है जो समय पर काम आये। और मृत्यु से अधिक निर्णायक समय और कौन-सा हो सकता है। अन्यथा ऐसे मित्रों और सम्बन्धियों का क्या लाभ जो स्वयं अज्ञानता में रोते हुए आमरण व्यक्ति को और अज्ञानी बना इसी संसार में पुनः खींच लाते हैं।

मैं विचार करने लगा हमें प्राप्त सौभाग्य पर। शायद अंतिम साँसे गिनते समय कोई हमारे लिए भी भगवान् से याचना करेगा। और शायद उन्हीं की प्रार्थनाओं के बल पर हम इस संसार की अपनी यात्रा को समाप्त कर पायेंगे।

मनस्पटल पर दौड़ते इन्हीं विचारों के साथ मुझे नींद आ गई। सुबह तक उक्त माताजी सदा-सदा के लिए सो गई थीं - एक नये जीवन के लिए।

-वंशी बिहारी दास